Chapter-2

अध्याय : २

हिन्दी साहित्य में ऐतिहासिक उपन्यासों की परंपरा

आमुख :

पूर्ववर्ती अध्याय के विवेचन में लक्ष्य किया जा चुका है कि ऐतिहासिक उपन्यास का शिल्प-विधान एक प्रकार से उसे स्वतंत्र विधा का स्वरूप प्रदान करता है। आधुनिक हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं के शुभारंभ और विकास के लिए भारतेन्दुजी ने जिस प्रकार अपना अविस्मरणीय योगदान दिया, उतना उपन्यास और ऐतिहासिक उपन्यास की दिशा में उनसे नहीं बन पडा। उन्हें स्वयं इस बात का ध्यान था और इसकी ओर उन्होंने पण्डित सन्तोष सिंहजी प्रभृति विद्वानों का ध्यान भी आकर्षित किया था।[1] उनके अनुरोध से " कादम्बरी ", " दुर्गेशनन्दिनी " , " राधारानी ", " स्वर्णलता " आदि का अनुवाद भी हुआ। इसके बाद मौलिक उपन्यास की रचना के लिए आपने " हमीर हठ " बडे उत्साह के साथ आरंभ किया था, किन्तु उसका प्रथम परिच्छेद लिख कर ही आप चल बसे।[2] यदि " हमीर हठ " उनके हाथों पूर्णतया लिखा जाकर प्रकाशित होता, तो वह हिन्दी साहित्य का सर्वप्रथम ऐतिहासिक उपन्यास होता, और भारतेन्दु जी सर्वप्रथम ऐतिहासिक उपन्यासकार।

विवेच्य उपन्यास साहित्य में हिन्दी का सर्वप्रथम ऐतिहासिक उपन्यास श्री किशोरीलाल गोस्वामी का " हृदय हारिणी " है,[3] जिसकी रचना उन्होंने १८९० में की। इसके बाद तो उन्होंने ढेर सारे ऐतिहासिक उपन्यास लिखे

१ बाबू शिवनंदन सहाय, हरिश्चंद्र, पृ० २४४

२ श्री ब्रजरत्नदास, हिन्दी उपन्यास साहित्य, पृ० १२८

३ डा० माखनलाल शर्मा, हिन्दी उपन्यास - सिद्धांत और समीक्षा, पृ० २५७

जिनमें से उनका सर्वाधिक प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास " तारा " है । तब से लेकर आज तक की एक दीर्घकालीन परंपरा है । इस कोटि में रखे जा सकनेवाले जो कतिपय उपन्यास आरंभ में लिखे गये हैं, उन्हें आचार्य शुक्ल प्रभृति विद्वानों ने एक प्रकार से ऐतिहासिक उपन्यास कहने में संकोच का अनुभव किया है ।[1]

वास्तव में ऐतिहासिक उपन्यास के सर्जन में जिन अपेक्षित भूमिकाओं की चर्चा प्रारंभ में की गई है, उस ओर इन आरंभिक लेखकों का प्रायः ध्यान ही नहीं गया था । अतः इस युग को हम प्रयोग काल कह सकते हैं ।

हिन्दी की समृद्ध उपन्यास परंपरा को ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से तीन युगों में विभाजित किया गया है :-

१ पूर्व प्रेमचंद युग	१८८२ से १९१६ ई० तक
२ प्रेमचंद युग	१९१७ से १९३६ ई० तक
३ प्रेमचंदोत्तर युग	१९३७ से अब तक ।[2]

किन्तु ऐतिहासिक उपन्यासों के सन्दर्भ में यह लक्ष्य कर लेना आवश्यक है कि उपर्युक्त आधार पर इस परंपरा का विभाजन समीचीन नहीं कहा जा सकता । कारण कि इस समय ऐतिहासिक उपन्यास अपनी प्रयोगावस्था से विकास की ओर बढ़ रहा था । जैसा कि आचार्य रामचंद्र शुक्ल के मत से स्पष्ट है ।

> " गोस्वामीजी के ऐतिहासिक उपन्यासों में भिन्न भिन्न समयों की सामाजिक और राजनीतिक अवस्था का अध्ययन और संस्कृति के स्वरूप का अनुसंधान नहीं सूचित होता । "[3]

१ आ० रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० ४७८

२ डा० महेन्द्र भटनागर, हिन्दी उपन्यास : सर्वेक्षण, पृ० १७

३ आ० रामचंद्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० ४७८

गोस्वामीजी के अतिरिक्त उन्होंने द्वितीय उत्थान के कतिपय ऐतिहासिक उपन्यास-कारों की रचनाओं में भी यही स्थिति देखी।[1] इसलिए, यदि अध्ययनगत और शिल्पगत समुचित पृष्ठभूमि की दृष्टि से देखा जाय, तो सच्चे अर्थों में हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यास का लेखन डा० वृंदावनलाल वर्मा से ही आरंभ होता है। अतः विवेचनगत सुविधा के विचार से इस विकास को दो प्रधान भागों में बांट कर यहां उसका अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है।

१ आरंभिक युग — १८९० — १९२६ ई० तक।

२ विकास-युग — १९२७ से अब तक।

आरम्भिक युग

इस युग के ऐतिहासिक उपन्यासकारों में श्री किशोरीलाल गोस्वामी के साथ उल्लेख्य हैं, पं० बलदेव प्रसाद मिश्र, स्वर्गी श्यामसुंदर शर्मा, मथुरा प्रसाद शर्मा, मुंशी देवी प्रसाद, जयरामदास गुप्त, युगल किशोर नारायण सिंह, हरिदास माणिक, बलभद्रसिंह, कृष्णकांत मालवीय, रामनरेश त्रिपाठी, बसंतलाल शर्मा, चन्द्रशेखर पाठक, ब्रजनंदन सहाय, बाबू गंगा प्रसाद गुप्त, मिश्रबंधु, अमोरी कृष्ण प्रसाद, सिंह, शिवव्रतलाल वर्म्मन और विश्वम्भर नाथ जिज्जा। ऐतिहासिक उपन्यास के शिल्प के सम्बन्ध में इस युग में हमें ऐतिहासिक उपन्यासकारों के दो प्रकार के विचारों से परिचय होता है। श्री किशोरीलाल गोस्वामी, पं० बलदेव प्रसाद, स्वर्गी श्याम सुंदर शर्मा, मथुरा प्रसाद शर्मा, और मुंशी देवी प्रसाद प्रभृति ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास की अपेक्षा कल्पना को ही अधिक महत्त्व दिया है। इतिहास तो वहां केवल एक झीने आवरण के रूप में विद्यमान है। श्री जयराम दास गुप्त, श्री युगल किशोर नारायण सिंह, श्री कृष्णकांत मालवीय आदि उपन्यासकारों ने कल्पना के बजाय इतिहास को प्रश्रय देना उचित माना। जिसका सर्वाधिक व्यापक स्वरूप

१ आ० रामचंद्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० ५१४

मिश्रबंधु प्रभृति विद्वानों के ऐतिहासिक उपन्यासों में दृष्टिगोचर होता है ।

इस युग के ऐतिहासिक उपन्यासों में रचनाकार का लक्ष्य, आदर्श भारतीय नारी, आदर्श राजपूत रमणी, आदर्श क्षत्रिय-बाला, आदर्श क्षत्रिय वीर, उनका स्वातंत्र्य प्रेम एवं जाति और देश की रक्षार्थ प्राण-पण से उनकी तत्परता, आर्य गौरव का गुणगान, एवं उसकी रक्षार्थ जातीय उद्बोधन आदि के द्वारा भारतीय आदर्शों और उसके अतीत कालीन गौरव की प्रतिष्ठापना की गई है । अपने लक्ष्य को पाठक के लिए सहज ग्राह्य बनाने के लिए रोमांस का पुट भी सर्वत्र कथावस्तु को आच्छादित किये रहता है । देश की दुर्दशा के कारण तत्कालीन शासकों - नवाबों की वैभवजन्य विलासिता, लम्पटता, धूर्तता और पामरता के भी कतिपय चित्र इन उपन्यासों में बिखरे पडे हैं ।

जैसा कि पूर्ववर्ती पृष्ठों में लक्ष्य किया जा चुका है कि इन उपन्यासों में इतिहास और कल्पना के सम्यक् विनियोजन का अभाव होने से एवं उनमें अधिकांशतः कल्पनाधिक्य होने के कारण उन्हें कल्पना प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास की कोटि में रखा जा सकता है । यद्यपि ये ऐतिहासिक उपन्यास की साधारण कोटि में आते हैं तथापि इनके सर्जन ने आगामी युग में ऐतिहासिक उपन्यास के स्वरूप का मार्ग प्रशस्त किया । इनके कल्पनाप्रधान और इतवृतात्मकता की स्थिति ने ही आगे चलकर श्री वृंदावनलाल वर्मा में ऐतिहासिक उपन्यास को एक सुंदर और संतुलित स्वरूप प्रदान किया है । यह इस युग के ऐतिहासिक उपन्यासकार और उनकी कृतियों के विवेक से सुस्पष्ट होगा ।

श्री किशोरीलाल गोस्वामी :

श्री गोस्वामीजी आलोच्य युग के सर्वप्रथम ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं । अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में आपने इतिहास को गौण और कल्पना को मुख्य स्थान दिया है । " तारा " की भूमिका में उन्होंने ऐतिहासिक उपन्यास सम्बन्धी

अपने विचार व्यक्त करते हुए स्वयं लिखा है, " हमने अपने बनाये उपन्यासों में ऐतिहासिक घटना को गौण और अपनी कल्पना को मुख्य रखा है और कहीं कहीं तो कल्पना के आगे इतिहास को दूर से नमस्कार भी कर दिया है । "[1] घटना ही नहीं किंतु पात्रों की सृष्टि और उनके चरित्र-चित्रण में भी गोस्वामीजी ने कल्पना का खुलकर प्रयोग किया है । किन्तु वातावरण के निरूपण में उसे ऐतिहासिकता का बाना पहनाने में वे सर्वथा प्रयत्नशील रहे हैं । इसी लिये डा० माखनलाल शर्मा ने इन उपन्यासों को ऐतिहासिक रोमांस कहा है । किन्तु जहां तक ऐतिहासिकता का प्रश्न है, वह गोस्वामीजी के उपर्युक्त वक्तव्य से स्वयंसिद्ध है कि अपने उद्देश्य की सिद्धि में वे इतिहास की उपेक्षा ही नहीं करते, अपितु उसके विरुद्ध जाने में भी उन्हें कोई हिचक नहीं है ।[2]

आपकी प्रमुख रचनाएं निम्नांकित हैं :-

(१) हृदयहारिणी आदर्श रमणी (१८९०)

(२) स्वंगलता वा आदर्श बाला (१८९०)

(३) तारा (१९०२)

(४) कनक कुसुम वा मस्तानी (१९०३)

(५) सुल्ताना रजिया बेगम वा रंगमहल में हलाहल (१९०४)

(६) सोना और सुगंध वा पन्ना बाई (१९०९)

(७) लखनऊ की कब्र वा शाही महलसरा (१९१७)

आदि[3]

हृदय हारिणी वा आदर्श रमणी (१८९०) :

यह गोस्वामीजी का सर्वप्रथम ऐतिहासिक उपन्यास है । बंगाल के

---

१ किशोरीलाल गोस्वामी, " तारा " भूमिका

२ डॉ० माखनलाल शर्मा, हिन्दी उपन्यास, सिद्धान्त और समीक्षा, पृ० २४२

३. डॉ० मदन मोहन दुबे, " हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यास " पृष्ठ २१० आरंभिक युग के ऐतिहासिक उपन्यासों के कथासार इसी पर आधारित हैं ।

नवाब सिराजुद्दौला और कृष्णनगर तथा रंगपुर के राजपरिवारों से इसका कथानक सम्बन्धित है। विलासी नवाब उपर्युक्त राजपरिवारों की महिलाओं के लिए लालायित हो जाता है। रंगपुर का राजकुमार नरेन्द्रसिंह उसे शासन च्युत करने के लिए मुर्शिदाबाद में गुप्त वेश में रहता है। यहीं कृष्णनगर की कुसुम कुमारी अपने शील की रक्षार्थ माता के साथ मालाएं बेचने का काम करती है। इन दोनों की प्रणय कथा प्रस्तुत उपन्यास का विषय है। नवाब की लोलुपता, राज्य में उसके विरुद्ध विप्लव का कारण बन उसके पतन में परिणमित होती है। तदनन्तर नायक नायिका के विवाह में उपन्यास की परिणति हो जाती है।

नायिका के हृदय हारी सौन्दर्य और उसके आदर्श चरित्र के कारण कृति का शीर्षक हृदय हारिणी वा आदर्श रमणी रखा गया है। नायक-नायिका के चरित्र-चित्रण द्वारा श्री गोस्वामीजी ने आदर्श क्षत्रिय वीर एवं आदर्श भारतीय नारी के गुणों का निरूपण किया है। सामंती-जीवन के कतिपय सजीव चित्र भी इसमें मिलते हैं।

२ लवंगलता वा आदर्श बाला : (१८९०)

इसके कथानक का सम्बंध भी सिराजु दौला के शासनकाल से है। इसमें रंगपुर कुमार नरेन्द्र सिंह की बहिन लवंग लता और उसके प्रेमी मदन मोहन की प्रेम-कहानी है। विलासी और लम्पट नवाब अपनी सत्ता और वैभव के बल पर लवंगलता को पाने के प्रयत्न करता है। किन्तु आदर्शबाला लवंगलता इससे विचलित नहीं होती। अंत में नवाब छल से उसका अपहरण करवा कर हीरा झील नामक महल में उसे बंदी बना लेता है। परन्तु लवंगलता का प्रेमी स्त्री वेश में वहां पहुंच उसे मुक्त करने का सफल प्रयास करता है।

यहां लवंग लता के चरित्र में लेखक ने एक आदर्श भारतीय बाला के

समस्त सद्गुणों का अंकन किया है। अन्य पात्रों का चरित्र-चित्रण भी यथार्थता-पूर्वक किया गया है।

३ तारा (१९०२) :

तीन भागों में विस्तृत तारा श्री गोस्वामीजी का महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक उपन्यास है। जोधपुर के राजकुमार अमरसिंह की पुत्री तारा उपन्यास की नायिका है। अमरसिंह अपने पिता से रूठ शाहजहाँ के यहाँ तीन हजारी मनसबदार बनकर यमुना तट पर रहते थे। उदयपुर के युवराज राजसिंह से कुमारी तारा का विवाह होना निश्चित हो गया था। इसी बीच शाही सजाची सलामत खाँ और शाहजादे दारा की कुदृष्टि तारा के यौवन पर पड़ी। वीर बाला तारा ने अपनी सखी रम्भा के साथ उन्हें विफल कर दिया और अमरसिंह ने भरे दरबार शाहजहाँ की उपस्थिति में कटार से सलामत खाँ का वध कर दिया। अंत में यथानिश्चित तारा और राजसिंह के विवाह में उपन्यास की परिणति होती है।

इसमें तारा के चरित्र-चित्रण द्वारा लेखक वीर राजपूत बालाओं के आदर्श और गौरव को प्रस्तुत करता है। अन्य पात्र भी अपनी स्थिति के अनुरूप चित्रित किये गये हैं। देशकाल के अनुरूप वातावरण का चित्रण भी सुंदर बन पड़ा है। उपन्यास में आरंभ से अंत तक पाठक की जिज्ञासा बनी रहती है।

४ कनक कुसुम वा मस्तानी (१९०२) :

अपने इस लघु उपन्यास में गोस्वामीजी ने पेशवा बाजीराव और मस्तानी की प्रणय कथा प्रस्तुत की है। मस्तानी एक घृणित और पतित जीवन व्यतीत करनेवाली माँ की एक उज्ज्वल चरित्र और सुशील बेटी थी। सौदागर से प्राप्त बाजीराव के चित्रावलोकन से वह उन पर मुग्ध हो, उन्हें पति स्वीकार कर लेती

है और युद्धस्थली में उनसे आत्म-निवेदन करती है।

गोस्वामीजी ने यहाँ सुधारवादी विचारानुसार एक महाराष्ट्रीय बाजीराव का एक यवनी से विवाह करवा कर बड़ी ही ऐतिहासिक विसंगति प्रस्तुत की है। वास्तव में तो बाजीराव को मस्तानी बुंदेल खण्ड की रक्षार्थ सहायता देने के उपलक्ष्य में महाराज छत्रसाल द्वारा उपहार के रूप में दी गई थी, जिसे स्वीकार करने पर पूना के ब्राह्मणों ने उनका तिरस्कार किया था।[1]

५ सुलताना रजिया बेगम वा रंग महल में हलाहल (१९०४) :

इसमें सुलताना रजिया बेगम की स्त्रियोचित आकांक्षाओं का चित्रण किया गया है। वह अलिष्ट और साहसी युवक याकूब को चाहने लगती है, किन्तु याकूब सौसन नामक अन्य सुंदरी के मोह पाश में था। इस प्रकार सुलताना के अंदर की नारी रजिया सदैव अपने मानसिक अभाव से संत्रस्त रहती है। वैभव सम्पन्न जीवन में उसके अतृप्त यौवन के कतिपय मनोवैज्ञानिक चित्रण प्रस्तुत करने के लिए लेखक उपन्यास में प्रयत्नशील दृष्टिगत होता है।

६ सोना और सुगंध वा पन्नाबाई (१९०९) :

ऐतिहासिक नामों के सहारे इस उपन्यास की कथावस्तु लेखक की निजी कल्पना सृष्टि है। बरबस ही लेखक ने एक शुद्ध प्रेमकथा को ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि से संयुक्त कर दिया है।

७ लखनऊ की कब्र वा शाही महलसरा (१९१७) :

इस उपन्यास में लखनऊ के शासक नवाब, अमीर और उमराव की

---

1. Shri G. S. Sardesai, New History of the Marathas V II. page - 107 - 108.

लम्पटता, उनके महलों की नारकीय विलासिता और वहां की नारियों की दयनीय स्थिति का चित्रांकन लेखक का अभीष्ट है। उसने महलों के इस पतित जीवन को लखनऊ की कब्र बताया है।

इन प्रमुख ऐतिहासिक उपन्यासों के अतिरिक्त लाल कुंवर या शाही रंग महल, इंदुमति या वन विहंगिनी, याकूती तख्ती या यमज सहोदरा, सुख शर्वरी आदि सामान्य रचनाएं हैं, जिनमें ऊपर विवेचित उपन्यासों से बढकर कोई विशेष बात नहीं है। उनकी कथावस्तु एक सामान्य दिशा का अनुसरण करती है।[1]

समीक्षा तथा निष्कर्ष :

श्री गोस्वामी जी उपन्यास को प्रेम-विज्ञान मानते थे।[2] अतः उनके सभी ऐतिहासिक उपन्यास प्रणय-कथा प्रधान हैं। इतिहास का तो उन पर एक झीना आवरण मात्र है। कई स्थानों पर उनके प्रणय-प्रसंग कथावस्तु के संघटन में शैथिल्य के निमित्त बनते हैं। उपन्यासों के शीर्षक प्रायः नायिकाओं के नाम पर हैं। इनके पात्र सत् और असत् दो प्रकार के हैं। प्रथम श्रेष्ठ गुण सम्पन्न एवं द्वितीय दुर्जन, पतित और घृणास्पद। पात्रों के सामाजिक और मनोवैज्ञानिक विकास का इनमें अभाव है। इनके कथोपकथन प्रायः औपन्यासिक आवश्यकतानुकूल एवं प्रभावशाली हैं। भाषा पर आपका अच्छा अधिकार है, किन्तु संस्कृत गर्भित हिन्दी की धुन में उसमें कतिपय स्खलन भी दृष्टिगत होते हैं। देश-काल के निरूपण में कतिपय कालदोष हैं। अपनी रचनाओं में आर्यों और आर्यावर्त की यशोगाथा गाना ही उनका अभीष्ट उद्देश्य रहा है।

---

१ श्री मदन मोहन दुबे, हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यास, पृ० २१५

२ किशोरीलाल गोस्वामी, " सुखशर्वरी " की भूमिका

जैसाकि आपके ऐतिहासिक उपन्यासों के उपर्युक्त विषय और शिल्पगत विवेचन से व्यक्त है, आपके सभी उपन्यास कल्पनाप्रधान ऐतिहासिक उपन्यास की कोटि में आते हैं। लोक परिचित पात्रों और ऐतिहासिक वातावरण के परिवेश में प्रस्तुत कथावस्तु द्वारा इन उपन्यासों ने जनता की साहित्यिक कोटि के उपन्यासों के पढ़ने की रुचि का एक ओर परितोष किया तो दूसरी ओर इसी मार्ग का अनुसरण कर साहित्य-रचना के लिए अन्य परवर्ती उपन्यासकारों को भी आपने आकर्षित और प्रभावित किया है।

सुधारवादी दृष्टिकोण से इनके उपन्यास लोक मानस को विचारों की उदात्तता, साहस और शक्ति का संदेश देते हैं। वहां उनमें कुछ अवांछनीय तत्त्व भी उभर आये हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में " उनमें उच्च वासनाएं व्यक्त करने वाले दृश्यों की अपेक्षा निम्न कोटि की वासनाएं प्रकाशित करने वाले दृश्य अधिक हैं और चटकीले भी। [1]

स्पष्टतः युवा मानस पर इनका प्रभाव अवांछनीय हो सकता है। समग्रतः ऐतिहासिक उपन्यास के क्षेत्र में गोस्वामीजी का योगदान बड़ा महत्त्वपूर्ण है। विवेच्य युग के समसामयिक और परवर्ती ऐतिहासिक उपन्यासकारों के लिए आप काफी प्रेरणा और प्रोत्साहन के स्रोत रहे हैं। १८९० से १९३७ तक २८ वर्ष के ऐतिहासिक उपन्यासों के सर्जन पर आपका प्रभाव स्पष्टतया परिलक्षित है। इस प्रकार ऐतिहासिक उपन्यास के क्षेत्र में वे अपूर्व महत्त्व के धनी हैं।

२ पं० बलदेव प्रसाद मिश्र : पानीपत : १९०२ :

ऐतिहासिक उपन्यास के शिल्प के सम्बन्ध में आप पूर्णतया गोस्वामी जी से प्रभावित हैं। पण्डितजी के इस ऐतिहासिक उपन्यास में पानीपत के मैदान

१ आचार्य रामचंद्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० ४७७

सदाशिव राव भाऊ के नेतृत्व में मराठा सेना और अहमदशाह दुर्रानी के मध्य हुए युद्ध, भारतीय राजाओं की फूट और उसीके परिणाम स्वरूप वीर मराठा सेना की दुर्भाग्य पूर्ण पराजय की हृदयस्पर्शी कथा है। उपदेशात्मक शैली में विविध विषयों का वर्णन इतिहास को आच्छादित कर लेता है। सदाशिव राव का चरित्र सर्वोपरि है। वर्गीकरण की दृष्टि से यह भी कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास की कोटि में आता है।

३ श्याम सुंदर शर्मा :

१ भारत का अधःपतन : (१९०४)

२ पंजाब-पतन, ३ राजपूत कीर्ति : (१९१०)

श्री गोस्वामीजी से प्रभावित आपके उपन्यासों में ऐतिहासिक उपन्यास का वही रूप दृष्टिगत होता है। इनके उपन्यासों के शीर्षकों से ही पाठक को उनके कथावस्तु का आभास हो जाता है। युद्ध-वर्णन और प्रेम-कथाएं इनका मुख्य आधार हैं। राजस्थान और पंजाब के वीर देश भक्तों का गुणगान और स्वार्थी विश्वासघातियों की निन्दा उपन्यासकार का एक लक्ष्य रहा है। इस प्रकार चरित्र-चित्रण में इन पर गोस्वामीजी का प्रभाव स्पष्टतया दृष्टिगत होता है। भाषा में पंजाबी और राजस्थानी और उर्दू शब्दों का बाहुल्य और कतिपय अशुद्ध प्रयोग खटकते हैं। शैली सर्वत्र इतिवृत्तात्मक ही बनी रही है। देशकाल और वातावरण का निरूपण भी कतिपय अस्वाभाविकताओं से पूर्ण है। [redacted] समग्रतया ये कृतियां श्रेष्ठ और उदात्त गुणों की प्रेरक हैं।

४ मथुरा प्रसाद शर्मा :

नूरजहाँ बेगम व जहांगीर : १९०६ :

बादशाह अकबर के शाहजादे सलीम और मेहरुन्निसा की प्रेमगाथा

इसका कथानक है । मेहरुन्निसा का विवाह शेर अफगान के साथ जहांगीर को असह्य था । अतः वह शेर अफगान का युद्ध में वध करवा मेहर को बेगम नूरजहां बना लेता है । समस्त उपन्यास ऐतिहासिक उपन्यास की अपेक्षा ऐतिहासिक विवरण सा लगता है । इसकी भाषा उर्दू मिश्रित खडी बोली है ।

५ मुंशी देवी प्रसाद : रूठी रानी : १९०६ ई० ।

मुंशीजी भी ऐतिहासिक उपन्यास में कल्पनाधिक के समर्थकों में से है ।

आपके इस उपन्यास का मुख्य लक्ष्य है, राजस्थान के राव ईश्वरदास की छोटी रानी उमादे के रूठने की प्रवृत्ति का विश्लेषण । इसका कथानक यद्यपि लघु है तथापि सुंदर और सुगठित । पात्र सभी आदर्शवादी हैं और उनका चरित्र-चित्रण स्वाभाविक । कथोपकथन में स्थानीय भाषा, मुहावरे तथा मनोरंजक सूक्तियों के प्रयोग ने स्थानीय वातावरण की सृष्टि में पर्याप्त सहयोग दिया है । उपन्यास में आद्योपान्त वर्णनात्मक शैली का प्रयोग है । राजस्थान की लौकिक परंपराओं की पृष्ठभूमि में राजपूत महिलाओं के आदर्शचरित्र की विशेषताओं का निरूपण ही यहां लेखक का उद्देश्य है ।

६ श्री जयरामदास गुप्त :

आपके ऐतिहासिक उपन्यास निम्नलिखित हैं :-

१ रंग में भंग (१९०७), २ चांदबीबी या वीर रमणी (१९०९), ३ प्रभात कुमारी (१९०९), ४ रोशन आरा या चांदनी और अंधेरा, ५ नवाबी परिस्तान (१९०९), ६ शूर शिरोमणि, ७ फूलकुमारी, ८ चम्पा, ९ किशोरी, १० वीर वीरांगना ।

सामान्यतया ऐतिहासिक उपन्यास के शिल्प के विषय में आपके विचार भी गोस्वामीजी से प्रभावित हैं । किन्तु साथ ही इतिहास के तथ्यों को प्रश्रय देने का

श्री गणेश भी आपके " नवाबी परिस्तान " से ही हुआ । मिश्रबंधुओं के उपन्यासों में इतिहास-प्रधानता की जो व्यापकता दीखती है, उसका अंकुरित स्वरूप इनके इस उपन्यास में अभिव्यक्त है ।

आपके उपर्युक्त सभी उपन्यास मुगल-काल के अंतिम दिनों की स्थिति से सम्बन्धित है । " नवाबी परिस्तान " की भूमिका में आपने यह दावा किया है कि प्रस्तुत उपन्यास के ऐतिहासिक तथ्य आपने ऐतिहासिक ग्रंथों से प्राप्त किये हैं । किन्तु पात्रों के नामों और दो-एक घटना-प्रसंगों के अतिरिक्त इनके इस उपन्यास में एवं अन्य उपन्यासों में भी इतिहास का पक्ष उपेक्षित प्राय ही रहा । उपर्युक्त उपन्यास में वाजिदअलीशाह और बेगमों की विलासिता का सजीव चित्रण है । आपके अन्य उपन्यास भी प्रेमकथा प्रधान हैं एवं उन पर भी इतिहास का एक झीना आवरण मात्र है । पात्रों के चरित्र-चित्रण की ओर यद्यपि इनका विशेष लक्ष्य नहीं था, तथापि वाजिद अलीशाह (नवाबी परिस्तान), कनकलता (वीर वीरांगना), किशोरी और महात्मा (काश्मीर-पतन) का चरित्र-चित्रण सुंदर बन पडा है । कथोपकथन गतिशील और नाटकीयता सम्पन्न हैं । किन्तु कहीं कहीं सूक्ति-बाहुल्य लगता है । देशकाल और वातावरण के निरूपण में लेखक प्रयत्नशील दिखाई देता है । भाषा पात्रानुकूल और प्रादेशिक शब्दावली से युक्त है । रचना-उद्देश्य एवं उपन्यास-शिल्प में लेखक गोस्वामीजी के पदचिह्नों का अनुसरण करता है । अत एव मुसलमान शासकों की अधीनता में हुई हिन्दू समाज की दुर्दशा के चित्रण द्वारा हिन्दुत्व के गौरव की रक्षा उनकी सभी रचनाओं का उद्देश्य रहा है ।

" उपन्यास बहार " प्रेस के संचालन के रूप में उपन्यास लेखन और प्रकाशन के क्षेत्र में गुप्त जी का योगदान अतीव महत्त्वपूर्ण है ।

७ युगल किशोर नारायण सिंह : राजपूत रमणी : १९१० :

" सेनाणी " नामक प्रसिद्ध राजस्थानी कविता की विषय-वस्तु पर यह कृति आधारित है। मेवाड के महाराणा राजसिंह का स्वामी भक्त सरदार चंद्रावत युद्ध में जाने से पूर्व अपनी वीर पत्नी से " सेनाणी " की मांग करता है और वह राजपूत वीरांगना अपना मस्तक काटकर भिजवा देती है, जिसे गले में डाल सरदार भयंकर युद्ध करता हुआ वीरगति प्राप्त करता है।

उपन्यास की नायिका में राजपूत रमणी एवं सरदार चंद्रावत में राजपूतों के स्वतंत्रता प्रेम और उसके लिए त्याग और बलिदान की भावना का सम्यक् निरूपण करना रचनाकार का मुख्य लक्ष्य है। देशकाल और वातावरण का चित्रण भी काफी सजीव और स्वाभाविक है। संक्षेप में, प्रस्तुत रचना में इतिहास और कल्पना का योग्य संयोजन करने के लिए लेखक सर्वथा प्रयत्नशील रहा है।

इस युग के कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों में यह एक ऐसा उपन्यास है जिसमें कल्पनाधिक्य की तुलना में इतिहास भी अपने अपने अनुपात में स्थिर गति से अभिवृद्धि करता दृष्टिगत होता है। इस दृष्टि से यह उपन्यास ऐतिहासिक उपन्यास के एक नये मोड की दिशा को इंगित करता है और इस प्रकार इसका भी अपना एक महत्त्व है।

८ हरिदास मणिक : महाराणा प्रताप की वीरता : १९०७ :

मेवाड उद्धारकर्ता, एवं मेवाड उद्धार।

इन रचनाओं में महाराणा-प्रताप के स्वातंत्र्य-प्रेम, उसके लिए उनका अविस्मरणीय बलिदान, एवं अनन्य पराक्रम आदि की अभिव्यक्ति ही लेखक का परम उद्देश्य है। किंतु ऐतिहासिक उपन्यास की अपेक्षा ये ऐतिहासिक विवरण से

अधिक प्रतीत होते हैं । इनमें लेखक स्वयं सब कुछ कहता चलता है । उपयुक्त संवाद एवं योग्य वातावरण के निरूपण का भी इसमें सर्वथा अभाव है ।

यहाँ से ही ऐतिहासिक उपन्यासकारों में कल्पनाधिक्य के विपरीत इतिहास-प्रधानता की वृत्ति मुखर होती दृष्टिगत होती है । इसके परिणामस्वरूप आगे लिखे जाने वाले ऐतिहासिक उपन्यास इतिवृत्तात्मक बनते चले जाते हैं और औपन्यासिक स्वरूप समाप्त प्रायः ।

९ श्री बलभद्रसिंह : सौंदर्य कुसुम : १९०९ : सौंदर्य प्रभा : १९७१, जय श्री : १९११ :

लेखक द्वारा इन कृतियों की रचना प्राचीन सदाचार और श्रद्धा-भक्ति की भावना के अनुसार की गई है । सौंदर्य कुसुम में छत्रपति शिवाजी महान योद्धा होने के साथ ही एक श्रद्धालु भक्त रूप में चित्रित किये गये हैं एवं उनकी सफलताएं, उनकी धार्मिक श्रद्धा के परिणाम ।

इस प्रकार ये कृतियां सुधारवादी उपदेशक के रूप में लिखी गई हैं और उपन्यास-कला की दृष्टि से ये सर्वथा साधारण हैं ।

१० श्री कृष्णकांत मालवीय : सिंहगढ विजय : १९१० :

प्रस्तुत उपन्यास छत्रपति शिवाजी के अनन्य सहयोगी वीरश्रेष्ठ तानाजी द्वारा सिंहगढ विजय पर आधारित है । कथावस्तु सर्वथा ऐतिहासिक है । उपन्यास में शिवाजी का चरित्र अत्यंत आदर्श रूप में अंकित किया गया है । वीर तानाजी एवं सती आदि पात्र भी आदर्शवादी हैं । कथोपकथन वर्णनात्मक अधिक है । अतः कुछ अरुचिकर-सा लगता है । किंतु कथावस्तु के विकास में सहायक अवश्य है । देशकाल के अनुरूप वातावरण का निरूपण बडा प्रभावशाली

है । कर्मठ वीर शिवाजी की भक्तवत्सलता और विनयशीलता की अभिव्यक्ति कृतिकार का यहां मुख्य उद्देश्य प्रतीत होता है ।

इतिहास और कल्पना के सुंदर समन्वय अथवा निर्वाह से यह उपन्यास अपने युग के ऐतिहासिक उपन्यासों की परंपरा में उच्च कोटि का है । लोक मानस पर इसके सुप्रभाव और तज्जन्य लेखक का महत्त्व इससे स्वतः ध्वनित है ।

११ रामनरेश त्रिपाठी : वीरांगना (१९११) और प्रभावती (१९१७)

चितौड की महारानी पद्मिनी की गौरव गाथा पर दोनों कृतियां आधारित हैं । रचनाएं उपन्यास की अपेक्षा इतिवृत्तात्मक मात्र लगती हैं । राजपूतों के स्वाभिमान, शौर्य और आत्मोत्सर्ग की ये सुंदर परिचायक हैं ।

१२ बसंत लाल शर्मा : महारानी पद्मिनी : १९१२ :

उपर्युक्त ऐतिहासिक घटना ही इस उपन्यास का आधार है । किन्तु उपन्यासकार इसमें विशेष सफलता का भागी नहीं बन पाया है । उपन्यास में कतिपय असंगतियां एवं अस्वाभाविकताएं विद्यमान हैं ।

१३ चन्द्र शेखर पाठक : भीमसिंह : १९१५ :

यह उपन्यास भी महारानी पद्मिनी के ऐतिहासिक बलिदान पर आधारित है । अलाउद्दीन खिलजी का चितौड पर आक्रमण,राजपूतों द्वारा अतुल पराक्रम के साथ दुर्ग की रक्षा, गोरा-बादल का युद्ध-कौशल और बलिदान एवं रानी पद्मिनी का सुती होना, उपन्यास की प्रमुख ऐतिहासिक घटनाएं हैं । भीमसिंह के साहस, वीरता और पराक्रम की गौरव गाथा उपन्यासकार का लक्ष्य है । भीमसिंह एक आदर्श वीर अलाउद्दीन एक खल नायक और महारानी पद्मिनी एक सुंदरी सती और आदर्श राजपूत वीरांगना के रूप में अंकित किये गये हैं । वातावरण की

सृष्टि काफी प्रभावशाली है। शैली इतिवृत्तात्मक एवं भाषा संस्कृतोन्मुख है किन्तु उसे विषय-वस्तु और पात्रानुकूल रखा गया है। इसमें लेखक ने कर्नल टाड के राजस्थान के इतिहास का पर्याप्त आश्रय लिया है।

१४ ब्रजनंदन सहाय : लालचीन : १९१६ :

इसमें गयासुद्दीन बलबन और उसके एक गुलाम लालचीन के मध्य हुए संघर्ष की कहानी है। बलबन के व्यवहार से क्रुद्ध लालचीन अपनी लडकी लुत्फुन्निसा द्वारा उसके भाई शमसुद्दीन को वश में कर सत्ता परिवर्तन का कारण बनता है और शीघ्र ही स्वयं पतन का शिकार भी।

उपन्यास में लालचीन एक क्रूर, कपटी, अभिमानी और दुःसाहसी के रूप में चित्रित है। गयासुद्दीन विलासी होने पर भी कुशल एवं योग्य शासक है। शमसुद्दीन सर्वथा दुर्बल और अयोग्य एवं लुत्फुन्निसा एक आदर्श मुसलमान युवती। कथानक के सुंदर संघटन और ऐतिहासिक वातावरण के निरूपण के लिए यह कृति हमारा विशेष ध्यान आकर्षित करती है।

१५ बाबू गंगा प्रसाद गुप्त :

आप भी इस युग के नये मोड के ऐतिहासिक उपन्यासकारों में से हैं, जिन्होंने ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास पक्ष को प्रश्रय दिया है। इसका प्रभाव इनकी कृतियों में स्पष्टतया दृष्टिगत होता है। आपकी कृतियां निम्नांकित हैं : नूरजहां : १९०२, वीर पत्नी : १९०३, कुंवर सेनापति : १९०३, पूना में हल चल : १९०३, हम्मीर : १९०४, वीर जयमल : १९०४।

उपर्युक्त उपन्यासों में अभीष्ट पात्रों के चरित्रों पर लेखक का विशेष ध्यान परिलक्षित होता है। इनमें हम्मीर, कुंवरसिंह और जयमल के चरित्र-चित्रण आकर्षक हैं। अन्य पात्रों के सम्बन्ध में भी लेखक ने उनके युद्ध में शौर्य एवं पराक्रम

तथा प्रेम में एकनिष्ठता का सम्यक् चित्रण किया है। भाषा पात्रानुकूल है, किन्तु कहीं कहीं शैली नाटकीय एवं उपदेशात्मक बन गई है। इनमें हिन्दुत्व की प्रतिष्ठा ही लेखक का मुख्य उद्देश्य रहा है। आपके उपन्यासों में ऐयारी और तिलस्म तत्त्व की अपेक्षा ऐतिहासिक तत्त्व की बहुलता दृष्टिगत होती है। इससे लेखक और उसकी कृतियां, दोनों के महत्त्व की अभिवृद्धि हुई है।

१६ मिश्रबंधु : (१) वीरमणि (२) पुष्यमित्र शुंग (३) चंद्रगुप्त मौर्य, (४) उदयन आदि।

पूर्ववर्ती पृष्ठों में हम इंगित कर आये हैं कि श्री जयरामदास गुप्त से परवर्ती ऐतिहासिक उपन्यासकारों के ऐतिहासिक उपन्यास में कल्पनाधिक्य की अपेक्षा ऐतिहासिकता को प्रश्रय प्राप्त होने लग गया था। मिश्रबंधुओं में वह इतिहास पक्ष अपने प्रखर स्वरूप में व्यक्त हुआ है। इससे इनकी कृतियों में औपन्यासिकता की बडी क्षति हुई है।

वीरमणि (१९१७) इनका सर्वप्रथम ऐतिहासिक उपन्यास है। अलाउद्दीन खिलजी के चित्तौड के आक्रमण के साथ इसे सम्बन्धित किया गया है। वीरमणि इसका प्रधान पात्र है। यह वीर एवं परोपकारी है। पत्नी से विरक्त हो, वह सन्यासी हो जाता है। कथानक की दृष्टि से इसमें और पिछले उपन्यासों में विशेष अंतर नहीं है। किन्तु यहां तक आते आते उपन्यास के विषय में जीवनी की भांति ऐतिहासिक विवरण की प्रचुरता उभर आई है।

मिश्रबंधु रचित " विक्रमादित्य ", " पुष्यमित्र शुंग " आदि अन्य उपन्यासों में भी " इतिहास " की प्रधानता प्रमुख रूप से दृष्टिगत होती है। इसके परिणामस्वरूप उपन्यास की मनोरंजकता के स्थान पर ऐतिहासिक नीरसता घर कर गई है। इतिहास के आग्रह के कारण इनकी कृतियों में उपन्यास-शिल्प का सर्वथा

अभाव रहा है। पात्रों का चरित्र-चित्रण जीवनी शैली पर है। कथोपकथन हैं किन्तु दीर्घ और अनुपयुक्त। भाषा संस्कृतनिष्ठ और अनाकर्षक है। देशकाल का चित्रण भी दुर्बल और दोषपूर्ण है। प्राचीन काल से सम्बन्धित आपके उपन्यासों में आधुनिक शिष्टाचार के व्यवहार का प्रदर्शन है।

संक्षेप में इनसे पूर्व के उपन्यासों में ऐतिहासिक तथ्यों की स्वल्पता और कल्पनाधिक्य था। इनके उपन्यासों में उसकी गहरी प्रतिक्रिया हुई। वहाँ कल्पना के स्थान पर इतिहास की प्रधानता व्याप्त हो गई। परिणामतः इनके ऐतिहासिक उपन्यास इतिवृत्तात्मक वर्णन मात्र रह गये। शिल्प की अपेक्षा इनका और इनकी कृतियों का केवल ऐतिहासिक महत्त्व है।[१६] अखौरी कृष्ण प्रसाद सिंह : बलिदान : १९२० वीर चूडामणिक : १९२१ :

इनका प्रथम उपन्यास आदर्शवादी प्रणाली का है इसमें प्रेम और कर्तव्य की विजय और वासना का पराभव अंकित है। दूसरे में युद्ध और प्रेम के चित्रों का अंकन है। औपन्यासिकता की दृष्टि से दोनों कृतियां साधारण हैं।

१७ शिवव्रत लाल वर्म्मन :(१)शाहीचोर : १९२१ (२) राणकदेवी

इस प्रथम उपन्यास में राजाशंखध्वज और कोकिला की प्रणय-कथा है। " राणक देवी " जूनागढ के " रा " खेंगार की सती रानी के जीवन पर आधारित है। " रा " खेंगार, राणक देवी और मीनल देवी इसके ओजस्वी पात्र हैं। लेखक में उपदेशात्मकता का आग्रह है। वातावरण का निरूपण सुंदर है शैली इतिवृत्तात्मक।

१८ विश्वम्भरनाथ जिज्जा : तुर्क रमणी : १९२५ :

इसमें तुर्की के मुस्तफा कमालपाशा और एक ग्राम्य बाला खानम

अलीजा की प्रणय-कथा है। उपन्यास की घटनाएं ऐतिहासिक हैं, कथोपकथन उपयुक्त एवं भाषा पात्रानुकूल। देशकाल के निरूपण में लेखक काफी सफल रहा है। किन्तु समग्रतः उपन्यास में औपन्यासिकता की अपेक्षा इतिवृत्तात्मकता की प्रधानता है।

निष्कर्ष :
oooooooo

पूर्ववर्ती पृष्ठों में निर्दिष्ट किये अनुसार आरंभिक युग के ऐतिहासिक उपन्यासकारों के ऐतिहासिक उपन्यास के स्वरूप के विषय में दो प्रकार के मत प्राप्त हैं। पहला तथाकथित ऐतिहासिक वातावरण के आवरण में कल्पनाधिक्य को प्रश्रय देता है, तो दूसरे वर्ग के लेखक इससे विपरीत अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में " इतिहास " तत्त्व को प्रधानता देते हैं। ऐतिहासिक उपन्यास के स्वरूप सम्बन्धी इनके विचारानुसार इनके उपन्यासों में कल्पनाधिक्य और इतिहास की प्रधानता परिलक्षित होती है। परिणामतः प्रथमवर्ग के उपन्यास ऐतिहासिक रोमांस बन गये हैं, जबकि द्वितीय वर्ग के उपन्यास केवल नीरस इतिवृत्तात्मक हैं। किन्तु यहां यह भी उल्लेखनीय है कि इन दोनों प्रकार के अतिरेकों ने परवर्ती काल में ऐतिहासिक उपन्यास के स्वरूप का मार्ग अवश्य प्रशस्त किया है। डा० वृंदावनलाल वर्मा के ऐतिहासिक उपन्यासों में इन दोनों के सुंदर समन्वय के परिणामस्वरूप ही ऐतिहासिक उपन्यास का एक परिपुष्ट और संतुलित स्वरूप दृष्टिगत हुआ है।

विवेच्य युग के ऐतिहासिक उपन्यासों में भारतीय-आदर्श और अतीत-गौरव की प्रतिष्ठापना, आर्य और आर्यावर्त की मुसलमान शासकों से रक्षा की दुहाई, हिन्दुओं में जाति और देश के प्रति प्रेम और बलिदान की भावना का उद्वेलन करने के लिए आदर्श,वीर और महान पुरुषों के चरित्र-चित्रण जैसे उनके उद्देश्य थे। उनमें सुधारवादी दृष्टिकोण से जहां उपदेशात्मकता उभर आई है, वहां कलात्मक पक्ष की बड़ी हानि हुई है। इस युग के द्वितीय वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यास तो जीवनी मात्र बन कर रह गये हैं। शिल्प की दृष्टि से इस युग की कृतियां सर्वसाधारण हैं।

किंतु इनका अपना ऐतिहासिक महत्त्व अवश्य है। श्री वृंदावनलाल वर्मा में ऐतिहासिक उपन्यास का जो सुविकसित स्वरूप प्राप्य है, उसकी आदिम यात्रा के पद-चिह्न इन्हीं कृतियों में अवलोकनीय हैं।

विकास-युग

इस युग का आरंभ श्री वृंदावनलाल वर्मा के सर्व प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास " गढ कुंडार " से होता है, जिसका प्रकाशन १९२७ ई० में हुआ। तब से लेकर अब तक इस युग में लिखे सुविकसित ऐतिहासिक उपन्यासों की एक समृद्ध परंपरा दृष्टिगत होती है। इस युग के सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं, श्री वृंदावनलाल वर्मा, आचार्य चतुर सेन शास्त्री, सर्वश्री भगवतीचरण वर्मा, ऋषभचरण जैन, जयशंकर प्रसाद, राहुल सांकृत्यायन, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, वृन्दावन दास, डा० रांगेय राघव, यशपाल, सत्यकेतु विद्यालंकार, प्रतापनारायण श्री वास्तव आदि।

विवेच्य युग तक आते आते प्रायः सभी ऐतिहासिक उपन्यासकार ऐतिहासिक उपन्यास के स्वरूप के विषय में सिद्धान्ततः इस मत के प्रतीत समर्थक होते हैं कि ऐतिहासिक उपन्यास में पात्र, घटना और वातावरण के निरूपण में ऐतिहासिक तथ्य और सम्भाव्य सर्जनशील कल्पना का समुचित और कलात्मक विन्नियोजन होना उसकी सर्वोपरि आवश्यकता है।[1] इन दोनों के सम्यक् निर्वाह पर ही कृति के कलापक्ष का निखार और उसकी प्रभावोत्पादकता निर्भर करती है। यही उसकी उत्कृष्टता का निर्णायक तत्त्व भी है, किन्तु प्रयोग में ऐतिहासिक उपन्यासकारों ने अपनी कृतियों में सर्वत्र इस सिद्धान्त का एकान्ततः अनुसरण नहीं किया है। डा० वृंदावनलाल वर्मा, आ० हजारी प्रसाद द्विवेदी प्रभृति विद्वान् इतिहास के तथ्यों की सुरक्षा और उसकी तद्रूपता के आग्रही हैं, जबकि आ० चतुरसेन शास्त्री और राहुल

१ प्रस्तुत प्रबंध, प्रथम अध्याय, पृ० ३९-४० पर ही विभिन्न रचनाकारों की ऐतिहासिक उपन्यास सम्बन्धी परिभाषाएं।

सांकृत्यायन प्रभृति विद्वान् उसमें अपनी आवश्यकतानुसार आवश्यक परिवर्तन और संशोधन को लेखक का अक्षुण्ण अधिकार मानते हैं ।[1] परिणामतः इनकी कृतियों में ऐतिहासिक तथ्य और औपन्यासिक शिल्प के संयोजन के अनुसार ऐतिहासिक उपन्यास के विविध रूप प्राप्त होते हैं, उदाहरणार्थ : वर्ग गत उपन्यासों की संक्षिप्त नामावली अपेक्षित है :-

१ विशुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास - यथा, झांसी की रानी " - लक्ष्मीबाई , माधवजी सिन्धिया, अहिल्याबाई, आदि ।

२ समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यास - यथा, गढ कुण्डार, मृगनयनी, सिंह सेनापति, वैशाली की नगर वधू, बाण भट्ट की आत्मकथा, अकेसी का मनार, चीनर, आचार्य चाणक्य, दिग्विजय आदि ।

३ वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास - विराटा की पद्मिनी, चारु चंद्रलेख, बहती रेता आदि ।

४ कल्पना प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास - भुवन विक्रम, मुर्दों का टीला, दिव्या आदि ।

इनके स्वरूप का विवेचन हम प्रथम अध्याय में ऐतिहासिक उपन्यास के वर्गीकरण के संदर्भ में प्रस्तुत कर आये हैं । उपर्युक्त विभाजन कृतियों की उत्कृष्टता का भी अभिव्यंजक है । इस दृष्टि से श्री वृंदावनलाल वर्मा के " झांसी की रानी ", " मृग नयनी ", " विराट की पद्मिनी " और " भुवन विक्रम " क्रमशः प्रत्येक वर्ग की प्रतिनिधि रचनाएं हैं । अन्य कृतियों का मूल्यांकन भी इसी आधार पर विचारणीय हैं ।

इस युग के ऐतिहासिक उपन्यासों में उनकी विषय-वस्तु और लक्ष्य की दृष्टि से निम्नांकित प्रवृत्तियां दृष्टिगत होती हैं :- (१) भारतीय अतीत के

१ डा० मालनलाल शर्मा, हिन्दी उपन्यास, सिद्धान्त और समीक्षा

गौरव का चित्रण, (२) ऐतिहासिक महापुरुषों का चरित्र-चित्रण, (३) समाजवादी दृष्टिकोण से तथ्यों की व्याख्या, एवं अपने सिद्धान्तों का निरूपण, और (४) वैयक्तिक दृष्टिबिंदु से विषयवस्तु की व्याख्या : जिनके उदाहरण क्रमशः (१) भुवन-विक्रम और इरावती ; (२) झांसी की रानी, मृग-नयनी बाणभट्ट की आत्मकथा, और आचार्य विष्णु गुप्त चाणक्य ; (३) सिंह सेनापति, जय यौधेय, और दिव्या ; तथा (४) वैशाली की नगरवधू और सोमनाथ आदि रचनाओं में द्रष्टव्य हैं। नीचे विवेच्य युग के उपन्यासकारों की कृतियों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है।

: श्री वृन्दावनलाल वर्मा :

आरंभिक युग के पूर्ववर्ती विवेचन के अनुसार ऐतिहासिक उपन्यास के स्वरूप के विषय में तत्कालीन ऐतिहासिक उपन्यासकारों में दो प्रकार की धारणाएं थीं। प्रथम वर्ग के गोस्वामीजी प्रभृति लेखक अपनी रचनाओं में इतिहास को गौण और कल्पना को सर्वोपरि स्थान देते थे जबकि द्वितीय वर्ग के मिश्रबंधु प्रभृति विद्वान् अपने उपन्यासों में इतिहास को प्रधानता देने के आग्रही थे। उनकी इन एकांगी धारणाओं के अनुसार ऐतिहासिक उपन्यास एक ओर ऐतिहासिक रोमांस बन गया, तो दूसरी ओर केवल इतिवृत्तात्मक निरूपण। डा० वृंदावनलाल वर्मा ने अपने इतिहास और साहित्य के सम्यक् अध्ययन के फलस्वरूप इस कमी को देखा, और उन्होंने अपने उपन्यासों में दोनों का सुष्ठु समन्वय स्थापित कर ऐतिहासिक उपन्यास को अपेक्षाकृत सुंदर, सुडौल और सुविकसित स्वरूप प्रदान किया। अतः डा० वृंदावनलाल वर्मा वास्तविक ऐतिहासिक उपन्यास-प्रणेता के गौरव के अधिकारी हैं। इनकी रचनाओं में प्राप्त इतिहास रोमांस और कल्पना के सुंदर समन्वय ने इन्हें श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यासकार का यश भी प्रदान किया है। रचना-क्रम की दृष्टि से आपकी

कृतियाँ निम्नांकित हैं ।[1]

(१) गढ कुंडार (१९२७), (२) विराटा की पद्मिनी (१९३०-१९३१), (३) मुसाहिबजू (१९३०), (४) झाँसी की रानी (१९४६), (५) कचनार (१९४६), (६) माधवजी सिंधिया (१९४८), (७) टूटे काँटे (१९४९), (८) मृगनयनी (१९५०), (९) मुक्त-विक्रम (१९५५), (१०) अहिल्याबाई (१९५५)

गढ कुंडार (१९२७) :

इसमें वर्णाश्रम धर्म की परंपरा से पीडित और जात्याभिमान से ग्रस्त खंगार और बुंदेला जातियों के पारस्परिक विग्रह द्वारा खंगारों के विनाश की कथा है । कथावस्तु में नाग और हेमवती, अग्निदत्त और मानवती तथा तारा और दिवाकर जैसे प्रेमी युगलों की सृष्टि के साथ युद्ध प्रसंगों के संयोजन से आद्योपान्त रोमांस और कुतूहल बना रहता है । पात्र सामंती युग का प्रतिनिधित्व करते हैं । साहस, शौर्य, जात्याभिमान, उद्दाम प्रेम, विलासिता, आदर्श-परायणता आदि सामंती प्रवृत्तियाँ उनमें व्याप्त हैं । कथोपकथन पात्र और प्रसंगानुकूल है एवं उपन्यास की आवश्यकतानुसार उपयोगी भी । भाषा सर्वथा सरल एवं भाववाहिनी है । प्रादेशिक शब्दावली का प्रयोग भी सुंदर और उपादेय बन पडा है । देश-काल और वातावरण के निरूपण में वर्माजी कुशल हैं । बुंदेलखंड और सामंती जीवन का चित्रण काफी प्रभावशाली और सफल है । बुंदेलों द्वारा खंगारों का विनाश ऐतिहासिक तथ्य है । इसमें कल्पना के योग से लेखक ने इसे सुंदर ऐतिहासिक उपन्यास का कलेवर प्रदान किया है ।

२ विराटा की पद्मिनी : (१९३०)

यह एक वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास है । इसकी कथावस्तु

१ डा० शशिभूषण सिंहल, उपन्यासकार वृंदावनलाल वर्मा, पृ० ११६

बुंदेलखंड की जन-श्रुतियों पर आधारित है। पाल के दागी की अत्यंत रूपवती देवी जैसी कन्या कुमुद और कुंजर की उदात्त प्रेम कथा प्रस्तुत करना इसका प्रधान लक्ष्य है। कथानक में रोमांस और कौतूहल के साथ सामंतीय व्यवस्थाजन्य मार्मिक वेदना सर्वत्र व्याप्त है। राजा नायक सिंह, देवीसिंह, मंत्री जनार्दन शर्मा, सूबेदार अली-मर्दान एवं कुंजर सिंह तथा कुमुद, गोमती और रानियों के चरित्र-चित्रण में लेखक ने बडी कुशलता का परिचय दिया है। पात्रों की विशेषताओं और दुर्बलताओं दोनों का सम्यक् निरूपण किया है। फर्रुखशियर के शासन में प्रादेशिक अराजकता, के कारण सामाजिक जीवन की अव्यवस्था का मार्मिक चित्रण पाठक के सम्मुख तत्कालीन वातावरण की यथार्थ झांकी प्रस्तुत करता है। भाषा पात्रों की स्थिति के अनुकूल, सरल और स्वाभाविक है। प्रेम और समर्पण की उदात्त भावना की क्षणिक अभिव्यक्ति के साथ उपन्यास का अंत पाठक के मन पर एक अमिट प्रभाव डाले बिना नहीं रहता।

३ मुसाहिबजू : (१९३०)

यह भी एक किंवदन्ती पर आधारित है। इसकी कथा दतिया राज्य की जागीर केरुआ के मुसाहिब दिलीपसिंह की दरिद्रचा, उनके मेहतरों की उनके प्रति स्वामी भक्ति, और उनकी प्रजा-वत्सलता आदि भावनाओं को अभिव्यक्त करती है। अंग्रेजों के शासन में विनाशोन्मुख सामंती व्यवस्था का मार्मिक चित्रण यहां द्रष्टव्य है। शिल्प की दृष्टि से यह एक साधारण उपन्यास है।

४ झांसी की रानी : (१९४६) :

" झांसी की रानी " वर्मा जी का प्रौढ एवं श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें इतिहास और कल्पना दोनों का सम्यक् समन्वय होते हुए भी लेखक विशुद्ध ~~इतिहास~~ इतिहास का विशेष रूप से आग्रही है। रचना के मूल में लेखक

का उद्देश्य यह सिद्ध करना है कि १८५७ की लडाई रानी की विवशता की प्रतिक्रिया नहीं अपितु उसके जन्मजात स्वातंत्र्य की उद्दाम भावनाओं का परिस्थितिजन्य प्रतिफलन था। इस उपन्यास में वर्माजी का कथा-क्षेत्र एक प्रान्त या प्रदेश की सीमा से आगे बढ राष्ट्रीयता के धरातल पर आ पहुंचता है। " उषा से पूर्व " और "उदय " में झांसी की विपन्नता, अंग्रेजों की साम्राज्यशाही के विरुद्ध विद्रोह की भावनाओं का उदय एवं " मध्यान्ह " में विद्रोहों का सूत्रपात और समग्र राष्ट्र व्यापी स्वतंत्रता संग्राम का प्रसार दृष्टिगत होता है। " अस्त " में रानी के अंतिम युद्ध और उसके वीर-गति की प्राप्ति में उपन्यास की समाप्ति होती है। इतिहास की प्रधानता से कतिपय स्थलों पर आई नीरसता का परिहार करने के लिए चार प्रेमी युगलों की अवतारणा भी की गई है। उपन्यास के पात्रों का चरित्र-चित्रण काफी सुंदर है। प्रायः सभी स्त्री और पुरुष पात्र कर्तव्य परायण, देशभक्त और आत्मोत्सर्ग करनेवाले हैं। रानी के चरित्रांकन द्वारा तो वर्माजी ने भारतीय नारी के साहस, शौर्य, त्याग, तपस्या और उत्सर्ग का विश्व साहित्य के सम्मुख एक अन्यतम। अनन्य उदाहरण प्रस्तुत किया है। विषय-वस्तु और वातावरण के ~~कि~~ निरूपण में उपन्यास में सर्वत्र प्रगतिशील एवं जनवादी दृष्टिकोण क्रियाशील दृष्टिगत होता है। रानी द्वारा जनता के साथ और सहयोग से उसके कार्यों का सूत्रपात्र और संचालन होता है। रानी का झांसी-आगमन, सांस्कृतिक उत्सव, झांसी की शासन-व्यवस्था, अंग्रेजों द्वारा आक्रमण और झांसी की प्रतिरक्षा आदि कतिपय स्थलों पर यह द्रष्टव्य है। कथोपकथन पूर्णतया प्रसंग और पात्रानुरूप तथा सजीव एवं ओजपूर्ण हैं। भाषा काफी प्रौढ सक्षम और स्थानीयता से युक्त है। ऐतिहासिक उपन्यास के शिल्प की दृष्टि से यह एक श्रेष्ठ कलाकृति है।

(५) कचनार : (१९४६) :

कचनार का कथानक राजगोंडों से सम्बन्धित है। कचनार के रूप में साहस और आत्मबल से सम्पन्न आदर्श भारतीय नारी का चरित्र-चित्रण लेखक का

चरम लक्ष्य है। दासी के रूप में वह दिलीप सिंह की पत्नी कलावती के साथ आती है। वह सुंदर, चतुर और प्रत्युत्पन्नमति है। अपने चरित्र की दृढ़ता के सहारे ही वह दिलीपसिंह और मानसिंह की वासना के पाश से सर्वथा बच निकलती है। "कचनार" वर्मा जी का उज्ज्वल नारी चरित्र है। ऐतिहासिक उपन्यास के शिल्प की दृष्टि से यह "गढ़-कुंडार" और "विराटा की पद्मिनी" की कोटि का है।

(६) माधवजी सिंधिया : (१९४८) :

यह अठारहवीं शताब्दी की पृष्ठभूमि पर आधारित है, जबकि सम्पूर्ण भारतवर्ष में अराजकता व्याप्त थी और मराठा शक्ति अपने अभ्युदय के लिए प्रयत्नशील थी। माधवजी सिंधिया इसी मराठा परंपरा का एक नवरत्न है। विभिन्न खंडों में विभाजित देश को संगठित कर शक्तिशाली बनाने के प्रयत्न एवं तुर्क, तुरानी और इनसे असंतुष्ट मराठी शक्तियों द्वारा उनकी विफलता का निरूपण उपन्यास की कथावस्तु है। उपन्यास के सभी पात्र और घटनाएं इतिहास सम्मत हैं। लेखक ने अपनी सर्जनशील कल्पना से उसे मांसलता और स्पन्दन प्रदान किया है। शिल्प की दृष्टि से इसे "झांसी की रानी" की परम्परा में रखा जा सकता है।

(७) टूटे काँटे : (१९४८) :

माधवजी सिंधिया की भाँति, इसका कथानक भी अठारहवीं शताब्दी में मुहम्मद शाह रंगीले के शासन-काल की पृष्ठभूमि पर आधारित है। इसमें मुहम्मद-शाह की विलासिता, देश में चारों ओर फैली अराजकता और सामान्य जीवन की अव्यवस्था तथा तत्युगीन शक्तियों का पारस्परिक द्वेष और जनता का भक्ति की ओर उन्मुख होना आदि स्थितियों का सम्यक् निरूपण हुआ है। मूरबाई और रोनी का मथुरा-वृंदावन गमन जनता के भक्ति-आंदोलन के प्रमाण हैं। शिल्प की दृष्टि से यह साधारण उपन्यास है।

(८) मृगनयनी :

" मृगनयनी " वर्माजी का एक सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास है। ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर (१४८६-१५१४) का शासनकाल इसकी कथावस्तु का आधार-फलक है। मानसिंह और मृगनयनी से सम्बन्धित इसकी आधारिक कथा सर्वथा ऐतिहासिक है, जबकि अटल और लाखी की प्रासंगिक कथा लेखक की संभाव्य कल्पना और लोक मान्यताओं पर आधारित। प्रस्तुत उपन्यास में भी वर्माजी ने मृगनयनी और लाखी के रूप में बडे ही हृदयग्राही, सशक्त, कर्मठ और कर्तव्य परायण नारी पात्रों की सृष्टि की है। कथावस्तु का संघटन, पात्रों का चरित्र-चित्रण कथोपकथन आदि तत्त्वों की दृष्टि से इसमें ऐतिहासिक उपन्यास का उत्कृष्ट शिल्प दिखाई देता है।

(९) अहिल्याबाई : (१९९९) :

इन्दौर राज्य की महारानी अहिल्याबाई के उत्तरकालीन शासकीय जीवन की घटनाओं पर आधारित यह ऐतिहासिक उपन्यास वर्माजी ने भारतीय इतिहास के उज्ज्वल रत्नों की गौरवगाथा प्रस्तुत करने की दृष्टि से लिखा था। इसमें इतिहास की प्रधानता इतनी उभर आई है कि सहज ही इसे जीवन-चरित कहने का विचार हो आता है। ऐतिहासिक उपन्यास के शिल्प की दृष्टि से यह किसी विशेष महत्त्व का अधिकारी नहीं है।

(१०) भुवन-विक्रम : (१९९९) :

इसकी कथावस्तु उत्तर वैदिक काल से सम्बन्धित है। इसके लिए लेखक ने भारतीय पुरातत्त्ववेत्ता डा० राधा कमल मुखर्जी और डा० बन्द्योपाध्याय के ग्रंथों का आधार लिया है। उत्तर वैदिक काल में अयोध्या के राजा रोमक के अकर्मण्य शासन में अनुशासनहीनता और अराजकता व्याप्त हो जाती है। स्वार्थी

धनिकों का द्वारा जनता का शोषण होता है। किन्तु योग्य शिक्षा सम्पन्न भुवन पुनः राज्य में शासन और व्यवस्था की स्थापना करता है। तत्कालीन राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक स्थितियों के चित्रण द्वारा लेखक अभीष्ट वातावरण के निरूपण में काफी सफल रहा है। यद्यपि वैदिक युग पर यह उनकी पहली कृति है, तथा उनके प्रयत्न सफल सराहनीय हैं।

उपर्युक्त कृतियों के विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वर्माजी के हाथों ऐतिहासिक उपन्यास को अपना सम्यक् स्वरूप प्राप्त हुआ। आपने उसे इतिहास और कल्पना के सुंदर समन्वय से मंडित कर एक ओर उपन्यास कला से आदर्श प्रतिष्ठित किया है। इससे और इसे लोक-रुचि और आकर्षण का विषय बनाया।

(१) वर्तमान समाज की समस्याओं और क्रांतियों का समाधान सुझाने के लिए उन्होंने ऐतिहासिक उपन्यास को एक योग्य माध्यम के रूप में स्वीकार किया। इनके द्वारा एक ओर समाज में भारतीय गौरव के चित्रण द्वारा उसके प्रसुप्त पौरुष को जाग्रत करने का प्रयत्न है, तो दूसरी ओर समाज की विघातक रूढ़ियों के उन्मूलन की ओर अंगुली निर्देश। गढ़ कुंडार और मृगनयनी में ऐसे कतिपय उदाहरण हैं।

(२) वर्माजी के उपन्यास यद्यपि मध्ययुगीन ऐतिहासिक महापुरुषों को आधार के रूप में ग्रहण कर लिये गये हैं, किन्तु उनके विषय-वस्तु और वातावरण के निरूपण में उनका जनवादी दृष्टिकोण सर्वत्र परिलक्षित होता है। झाँसी की रानी, मृगनयनी, मुसा हिजू, भुवन विक्रम आदि कृतियों में जन-साधारण के महत्त्व भी प्रतिष्ठा अक्षुण्ण रूप से विद्यमान है। जनता

की शक्ति में उन्हें अगाध विश्वास है, और वह यथास्थान अपनी अभिव्यक्ति पा लेता है ।

(३) नारी-स्वातंत्र्य वर्माजी के ऐतिहासिक उपन्यासों की एक अनन्य विशेषता है । इनके उपन्यासों में नारी पात्रों की सृष्टि भव्य और उदात्त है । झांसी की रानी, मृगनयनी, लाखी, और कचनार इनके अमर पात्र हैं, जो देश और कर्तव्य के लिए साहस, शौर्य, त्याग, तपस्या तथा आत्मोत्सर्ग करने के लिए सदैव अविस्मरणीय रहेंगे ।

(४) वर्माजी के ऐतिहासिक उपन्यासों की एक मुख्य विशिष्टता ऐतिहासिक वातावरण की सप्राण अभिव्यक्ति है । यह अभिव्यक्ति इतनी, सशक्त और कलात्मक है कि उसका मूर्त स्वरूप पाठक के मानस पटल पर अंकित हो उठता है । वर्माजी की इस सफलता का रहस्य है, शिकारी वेष में उनका समस्त बुंदेल खंड का पर्यटन और संन्निकटस्थ अवलोकन ।

(५) वर्माजी की कृतियों में ऐतिहासिक उपन्यास को अपने समग्र स्वरूप की उपलब्धि सुलभ हुई है । उनकी रचनाओं में एक ओर झांसी की रानी जैसे विशुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास है, तो दूसरी ओर मृगनयनी व गढ़ कुंडार जैसे समन्वान्वित ऐतिहासिक उपन्यास । उनका " वराटा की पद्मिनी " वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास का स्वरूप प्रस्तुत करती है, तो भुवन-विक्रम कल्पनाप्रधान ऐतिहासिक उपन्यास ।

(६) वर्माजी के ऐतिहासिक उपन्यासों की सफलता का चरम रहस्य है उनका अपने उपन्यासों में नियोजित रोमांस । वर्माजी ने इसका अपनी कृतियों में खुलकर और सफल प्रयोग किया है । इससे उनकी कृतियों में पाठकों की आद्योपान्त जिज्ञासा, आकर्षण और उनके ऐतिहासिक

उपन्यासों में इतिहास, कल्पना और रोमांस के इस संयोजन ने ही उन्हें श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यासकार के गौरव का यश प्रदान किया है। झांसी की रानी, मृगनयनी, कचनार, गुढ कुंडार, विराटा की पद्मिनी उनकी सर्वाधिक लोकप्रिय रचनाएं हैं। इन्होंने कृतिकार को ऐतिहासिक उपन्यासकारों में मूर्धन्य स्थान का अधिकारी बनाया है। इस युग के परवर्ती ऐतिहासिक उपन्यासकार भी इन्हीं के ऐतिहासिक उपन्यास के स्वरूप को आदर्श मान कर अपनी रचनाएं प्रस्तुत करते रहे हैं।

२ आचार्य चतुर सेन शास्त्री :

सिद्धान्तः शास्त्रीजी ऐतिहासिक उपन्यास में इतिहास और कल्पना के समन्वय को उसका मूल आधार मानते हैं। किन्तु अपनी आवश्यकतानुसार इतिहास में परिवर्तन कर लेना भी उनकी दृष्टि से लेखक का अपना अक्षुण्ण अधिकार है। परिणामतः इतिहास का आधार ग्रहण करके भी वे उसमें अपनी कल्पना का उन्मुक्त प्रयोग करते दृष्टिगत होते हैं। इससे उनके उपन्यासों में कतिपय ऐतिहासिक असंगतियां आ उपस्थित हुई है।

ऐतिहासिक उपन्यासों के सर्जन के मूल में शास्त्रीजी का अपना वैयक्तिक दृष्टिकोण क्रियाशील रहा है। उनकी दृष्टि से उन्हें ऐतिहासिक घटनाओं और पात्रों के संदर्भ में जहां अनौचित्य लगा, उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप उन्होंने अपने उपन्यासों में उसका परिमार्जन किया है। उनकी कृतियों के अध्ययन से यह स्पष्ट है।

(१) वैशाली की नगर वधू :

वैशाली के नियमानुसार वहां की सर्वाधिक सुंदरी कन्या को उस

जनपद की नगरवधू बनाया जाता था । इसमें उसकी इच्छा-अनिच्छा का कोई विचार नहीं किया जाता था । वैशाली के इस धिक्कृत कानून के प्रति शास्त्रीजी के मनमें एक गहरी और उग्र प्रतिक्रिया हुई जिसकी अभिव्यक्ति उन्होंने " वैशाली की नगरवधू " के सर्जन और आम्बयाली के चरित्र-चित्रण द्वारा की है ।

बौद्ध कालीन भारतीय इतिहास और संस्कृति के विस्तृत फलक पर आधारित यह विशाल उपन्यास दो भागों और ७८७ पृष्ठों में प्रस्तुत है । इसका कथानक यद्यपि सुगठित नहीं है, किन्तु घटना-वैविध्य पाठक का कुतूहल बनाये रखता है । लेखक की ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विवरण-प्रियता पात्रों के चरित्रांकन में भी बाधक रही है । अम्बपाली, उदयन, बिम्बसार, सोमप्रभ आदि पात्रों में से किसी को भी चरित्र की उदात्तता से मंडित नहीं कर सका । देशकाल और वातावरण के निरूपण में कुछ एक दोषों के बावजूद भी लेखक के प्रयत्न काफी सफल हैं । किन्तु सांस्कृतिक और पारिवारिक समारोहों में मांस, मदिरा और यौनानंद के वर्णन की अधिकता खटके बिना नहीं रहती । आपकी भाषा सरल, गतिशील और रंजात्मक है । हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासों की परंपरा में यह एक अद्वितीय विपुलकाय और काफी लोकप्रिय उपन्यास है । इसी ने शास्त्री जी को श्रेष्ठ उपन्यासकारों की पंक्ति में ला उपस्थित किया ।

(२) सोमनाथ :

इस उपन्यास की रचना के मूल में लेखक की महमूद गजनी के प्रति अनन्य सहानुभूति क्रियाशील रही है । इतिहास में वह आक्रांता, लुटेरा, नरसंहारक और मूर्तिभंजक के रूप में चित्रित किया गया है । शास्त्रीजी ने उसमें भी मानवता का चित्रण कर उसके कल्मष को धोने का प्रयत्न किया है । इसके अतिरिक्त भीम, गंग सर्वज्ञ, चालुक्य दद्दा आदि पात्रों का चरित्रांकन काफी सजीव और प्रभावशाली बन पडा है । चोला उपन्यास की नायिका है, जिसके चरित्र की उदात्तता को लेखक ने

खूब संवारा है। कथोपकथन चरित्रों पर प्रकाश डालने वाले एवं कथानक की गति में सहायक दृष्टिगत होते हैं। शास्त्रीजी की भाषा-शैली सहज-स्वाभाविक और प्रवहमान्ता से युक्त है। ऐतिहासिक उपन्यास के शिल्प की दृष्टि से " वैशाली की नगरवधू " की अपेक्षा " सोमनाथ " एक अधिक श्रेष्ठ उपन्यास है।

शास्त्रीजी की ये दो कृतियाँ कतिपय ऐतिहासिक विसंगतियों के उपरांत भी हिन्दी-जगत् में काफी लोक-प्रिय रही हैं और इन्हीं के आधार पर शास्त्रीजी श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यासकारों की कोटि में मान्य हैं।

(३) भगवतीचरण वर्मा :

१ पतन (१९२९), २ चित्रलेखा (१९३४)

" पतन " वर्माजी की प्रारम्भिक कृति है। इसमें लेखक ने लखनऊ के नवाब वाजिदअली शाह की विलासिता के कारण उनके पतन की स्थिति का चित्रांकन किया है। अन्य पात्र और घटना-प्रसंग लेखक की कल्पना-सृष्टि है। पात्रों का चरित्र-चित्रण अधिकांशतः इतिवृत्तात्मक शैली में किया गया है। शाही महल का वातावरण काफी सजीव और विलासितापूर्ण है। भाषा सर्वत्र सरल प्रवहमान और भावानुगामिनी है। कृति में प्रेम और तृष्णा की मीमांसा लेखक का अभीष्ट लक्ष्य रहा है।

चित्रलेखा : भगवती चरण वर्मा का यह लोकप्रिय ऐतिहासिक उपन्यास है। अध्यात्मवाद पर भौतिकवाद की विजय बताने के उद्देश्य से इसकी रचना हुई है। तदनुसार नर्तकी चित्रलेखा, सामंत बीजगुप्त और योगी कुमार गिरि जैसे पात्रों की सृष्टि और घटना-प्रसंगों का आयोजन हुआ है। उपन्यास का वातावरण मात्र ऐतिहासिक है शेष सब कल्पनाजन्य। अपने वैयक्तिक दृष्टिकोण के अनुसार लेखक चित्रलेखा के आगे कुमारगिरि का पराभव-निरूपित कर सफल रहता है। " पाप "

और " पुण्य " की परिभाषा भी लेखक के वैयक्तिक-दर्शन पर आधारित है । उपन्यास के कथानक में आद्योपान्त कुतूहल और आकर्षण बना रहता है । चित्रलेखा वीरगुप्त, कुमारगिरि, आदि के चरित्र-चित्रण सुंदर बन पडे हैं । वातावरण की सृष्टि में लेखक अधिकांशतः सफल रहा है । समग्रतः " चित्रलेखा " एक लोकप्रिय वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास है ।

४ क्षमचरण जैन : गदर : १९३२ :

१८५७ ई० की घटनाओं के आधार पर इस उपन्यास का सर्जन हुआ है । तत्कालीन विस्फोटक स्थिति का चित्रण कर लेखक दीवान अजीमुल्ला और नाना साहब की लडकी मैना की काल्पनिक प्रेम-कथा द्वारा हिन्दू-मुस्लिम एकता पर बल देता दृष्टिगत होता है । गदर की ऐतिहासिक पृष्ठभूमिका में लेखक की यह प्रणय-कथा सर्वथा अस्वाभाविक और कृत्रिम लगती है । गदर पूर्व की परिस्थितियाँ और लोक मानस की प्रतिक्रियाओं का वर्णन ठीक बन पडा है । भाषा पात्रानुकूल एवं शैली इतिवृत्तात्मक है । शिल्प की दृष्टि से यह एक साधारण कृति है ।

५ जयशंकर प्रसाद : " इरावती " :

यद्यपि प्रसाद जी का यह एक अपरिसमाप्त ऐतिहासिक उपन्यास है, फिर भी इसमें प्रसाद जी के ऐतिहासिक उपन्यास सम्बन्धी रचना कौशल का सुंदर उदाहरण द्रष्टव्य है । इसमें लेखक देश को जर्जरित करनेवाले बौद्ध धर्म के अहिंसा और अनात्मवाद का उन्मूलन कर शैव-दर्शन के प्रवृत्तिमूलक आनंदवाद की स्थापना के लिए प्रयत्नशील है । उद्देश्यानुसार ही इसमें लेखक ने महाकाल के पुजारी ब्रह्मचारी आनंद की सृष्टि की है । पुष्यमित्र, अग्निमित्र, इरावती, आदि इसीके अनुयायी हैं । कथानक में आद्योपान्त रोचकता है । प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण सुंदर बन पडा है । कथोपकथन अलंकारिता और दार्शनिकता से युक्त हैं, भाषा संस्कृतनिष्ठ

और आलंकारिक। देशकाल के चित्रण में लेखक सर्वथा कुशल हैं, विविध वर्णनों के माध्यम से उसने तद्युगीन वातावरण का जीवंत स्वरूप प्रस्तुत किया है। यदि यह उपन्यास प्रसाद जी के हाथों पूर्ण हो गया होता, तो लेखक निःसंदेह उत्तम ऐतिहासिक उपन्यासकार के गौरव का अधिकारी होता।

६ राहुल सांस्कृत्यायन :

(१) सिंह सेनापति : १९४४, (२) जय यौधेय : १९४४, (३) मधुर स्वप्न : १९४९, (४) विस्मृत यात्री : १९५३-५४।

ऐतिहासिक उपन्यास में यद्यपि राहुल जी ऐतिहासिकता की सुरक्षा के पूर्ण समर्थक हैं।[१] किन्तु अपनी रचनाओं में उन्होंने इतिहास का उपयोग सर्वदा अपने लक्ष्य की आवश्यकतानुसार किया है। उनके ऐतिहासिक उपन्यासों में अतीत काल है किन्तु वहां भी उसके माध्यम से वे सदैव मार्क्सवादी सिद्धान्तों और समाज-व्यवस्था का उन्नत प्रचार करते हैं। उनके विचारानुसार जीवन में साम्यवाद और बौद्धधर्म के समन्वय द्वारा संसार में सामाजिक साम्य की स्थापना हो सकती है। उनके इस प्रचारवादी दृष्टिकोण का प्रभाव उनके ऐतिहासिक उपन्यासों में सर्वत्र द्रष्टव्य है।

सिंह सेनापति : (१९४४)

मगध सम्राट बिम्बसार द्वारा वैशाली पर आक्रमण और सिंह सेनापति द्वारा वैशाली के गणतंत्र की रक्षा इस उपन्यास की मुख्य कथा है। उपन्यास का नायक सिंह लेखक के विचारों का वाहक है। उसके द्वारा राहुल जी ने उपन्यास में राजतंत्र और गणतंत्र दोनों शासन पद्धतियों का अपनी दृष्टि से तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत कर राजतंत्र को हेय और मनुष्यता का कलंक कहलवाया है और

१. आलोचना; उपन्यास विशेषांक, अक्टूबर, १९५५.

गणतंत्र को उत्तमोत्तम शासन-पद्धति । अंत में उन्होंने सिंह सेनापति के मार्क्सवाद और बौद्ध दर्शन के समन्वय में सामाजिक साम्य द्वारा मानवता के सुखी जीवन की आस्था व्यक्त की है । प्रचारवादी दृष्टिकोण की प्रधानता के कारण औपन्यासिक कला में काफी शैथिल्य दृष्टिगत होता है ।

जय यौधेय : (१९४४)

यह उपन्यास चौथी शताब्दी के उत्तरार्द्ध के भारतीय जीवन पर आधारित है । "सिंह सेनापति " की भाँति इसमें भी मगध राज्यतंत्र से " जय " द्वारा यौधेय गणतंत्र की रक्षा की कहानी प्रस्तुत है । आचार्य वसुबन्धु से शिक्षा-दीक्षा प्राप्त जय बौद्ध भिक्षु के रूप में गणराज्यों की स्थिति का अध्ययन करने के लिए यात्रा करता है और उनकी शक्तिशाली सेना की सहायता से चंद्रगुप्त विक्रमादित्य के आक्रमण को विफल कर देता है । किन्तु वृद्धावस्था में गुप्त सम्राटों द्वारा यौधेय गण राज्य पूर्णतया ध्वस्त कर दिया जाता है । उपन्यास का अंत साम्यवादी पद्धति के अनुरूप है ।

" मधुर-स्वप्न " : १९४९ :

इसमें लेखक ने मध्य ऐशिया को अपने उपन्यास की कथावस्तु का आधार-फलक बनाया है । राहुलजी ने इसमें क्वांत के समय में होने वाले आर्थिक और धार्मिक शोषण और संघर्षों की स्थितियों का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत कर साम्यवाद की शरण में उनसे प्राप्य उद्धार की ओर अंगुलिनिर्देश किया है ।

विस्मृत यात्री : १९५२-५४ :

इसमें लेखक अपने विचार-दर्शन के अनुरूप नरेन्द्र यश नामक बौद्ध यात्री द्वारा आर्थिक और सामाजिक समानता में समाज की सुख-शांति का प्रचार करवाता है ।

राहुल जी की उपर्युक्त कृतियों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उनके उपन्यासों में ऐतिहासिक उपन्यास में अपेक्षित इतिहास और कल्पना के सम्यक् समन्वय का अभाव है। इतिहास को उन्होंने उनके आधार के रूप में ग्रहण कर शेष सब कुछ अपनी कल्पना के बल पर प्रस्तुत किया है। शिल्प की दृष्टि से इनकी कथावस्तु सुगठित नहीं हैं। विवरणों की प्रचुरता उनकी शिथिलता और रसहीनता का मुख्य कारण है। उनके पात्रों का चारित्रिक विकास भी प्रभावशाली नहीं है। उनके नायक भी पाठक के मन पर कोई स्थायी प्रभाव नहीं छोडते। कथोपकथन वाद-विशेष की व्याख्या से अनाकर्षक और भार स्वरूप लगते हैं। देशकाल और वातावरण की सृष्टि में लेखक सर्वत्र सिद्धहस्त है। भाषा प्रायः सरल है किंतु कहीं कहीं संस्कृत-निष्ठ और अपभ्रंश-प्राकृत की शब्दावली से युक्त।

अपने उपन्यासों में राहुलजी ने सर्वत्र भौतिक वाद को महत्त्व दिया है और अध्यात्मवाद पर खूब प्रहार किये हैं। अपने साम्यवादी विचारों का जन साधारण तक प्रचार-प्रसार करने की दृष्टि से उन्होंने राज्यतंत्र की कटु आलोचना की हैं और गण तंत्र को उत्तम शासन पद्धति के रूप में प्रतिष्ठित किया है।

मार्क्सवाद के विचार-दर्शन के साथ ही वे बौद्ध दर्शन से भी काफी मात्रा में प्रभावित है। मार्क्स को वे आधुनिक युग की पृष्ठभूमि में बुद्ध का ही रूप मानते हैं। इसीलिए उन्होंने अपने विचारों का वहन करनेवाले " सिंह " और " जय " जैसे पात्रों से बौद्ध विचार-दर्शन अंगीकार करवाया और जीवन में मार्क्सवाद तथा बौद्ध-दर्शन के समन्वय द्वारा मानवता को सुख-शांति देनेवाले सामाजिक-साम्य की स्थापना पर बल दिया।

७ आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी :

(१) बाण भट्ट की आत्मकथा (२) चारु चंद्रलेख

पूर्ववर्ती पृष्ठों पर निर्दिष्ट किये अनुसार आचार्य द्विवेदी ऐतिहासिक उपन्यास में इतिहास और कल्पना के सम्यक् विनियोजन के समर्थक हैं। [1] इनके ऐतिहासिक उपन्यासों में इस तथ्य का पूर्णतया संयोजन द्रष्टव्य है।

बाणभट्ट की आत्मकथा :

इसमें बाणभट्ट के पूर्वार्द्ध जीवन की आत्मकथा है। उसका घर से भाग जाना, निपुणिका की इच्छानुसार मौखरी वंश के छोटे राजकुल से भट्टिनी की मुक्ति, मगध की ओर प्रयाण, मार्ग में संकट के कारण भद्रेश्वर दुर्ग में आश्रय, कुमार कृष्णवर्द्धन के आमंत्रण पर पुनः भट्टिनी और निपुणिका के साथ स्थाण्वीश्वर आगमन, सम्मानार्थ अभिनय में निपुणिका का प्राणान्त और भर्वुपाद के आदेश से बाण का भट्टिनी को वहीं छोड पुरुष पर को प्रस्थान इसकी मुख्य घटनाएं हैं। बाण, निपुणिका, कुमार कृष्ण वर्द्धन, भट्टिनी आदि अधिकांश पात्र ऐतिहासिक हैं। प्रासंगिक कथाएं लेखक की कल्पनाजन्य हैं।

अंतिम कुछ उच्छ्वासों के अतिरिक्त कथा में पूरा प्रवाह है और है आद्योपांत रोचकता। पात्रों का चारित्रिक-विकास काफी सुंदर, मनोवैज्ञानिक और उदात्त राष्ट्रीय चेतना से युक्त है। कथोपकथन स्वल्प, और प्रभावपूर्ण और औपन्यासिक आवश्यकतानुरूप। देशकाल और वातावरण के निरूपण में कृतिकार का कौशल प्रसंशनीय है। भाषा में कुछ क्लिष्टता है, किंतु वह इतनी सुगठित और प्रवाहशील है कि पाठक मुग्ध मन हो अपने पठन में अग्रसर होता ही रहता है। इसमें ऐतिहासिक भ्रम की सृष्टि में लेखक इतना सफल रहा है कि पाठक इसे सत्य ही बाण भट्ट की आत्मकथा मानते रहे हैं। द्विवेदीजी की यह कृति काफी लोकप्रिय रही और आज है भी।

1 प्रस्तुत प्रबंध : प्रथम अध्याय, पृ० ३८-३९

चारु चंद्र लेख : (१९६३) :

यह एक बारहवीं शताब्दी को लक्ष्य में रखकर लिखा गया ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें एक ओर रानी चंद्र लेखा की सहायता से नागनाथ के कोटिवेधि रस-सिद्धि की कथा है, तो दूसरी ओर तत्कालीन उत्तर भारत में पारस्परिक संघर्ष और विदेशी आक्रमणों द्वारा व्याप्त अरक्षा और अशांति की मार्मिक कहानी। सातवाहन, चंद्रलेखा, नागनाथ, इसके मुख्य पात्र हैं और उद्युगीन सांस्कृतिक चित्रण के लिए अन्य कतिपय पात्रों और घटना प्रसंगों की सृष्टि लेखक की उर्वर कल्पना का फल है। तथापि यह मानना होगा कि पात्र, घटना-प्रसंग और वातावरण के निरूपण में लेखक ने अधिकांशतः ऐतिहासिक तथ्यों का आधार लिया है।

उपन्यास का कथावस्तु सुगठित है और पाठक की जिज्ञासा निरंतर बनी रहती है। यद्यपि कई स्थलों पर दीर्घवर्णन भी विद्यमान हैं। उपन्यास के प्रायः सभी पात्र अपने योग्य रूप में प्रस्तुत किये गये हैं। कथोपकथन आत्मकथा की भांति यहां भी स्वल्प मात्रा में है। किंतु वह पात्र, विषय वस्तु और वातावरण की दृष्टि से सर्वथा उपयोगी एवं प्रभावशाली है। भाषा आपकी वशवर्तिनी है। पात्र, प्रसंग और परिस्थिति के अनुसार उसका सहज, सरल, और रोचक रूप दृष्टिगत होता है। वातावरण की दृष्टि से लेखक ने इस उपन्यास में तद्युगीन सभी परिस्थितियों, लोक, समाज और राज्य की विविध अवस्थाओं और उनकी प्रवृत्तियों का एक यथार्थ चित्रांकन प्रस्तुत किया है। इस रचना के मूल में लेखक का लक्ष्य जनता के सामने यह स्पष्ट करना है कि जन-कल्याण विविध उपासना पद्धतियों और मंत्रोच्चार से नहीं, अपितु अक्षुण्ण आत्म-बल और सुदृढ संयम से संभव है, शक्य है। लोक प्रियता में इसका स्थान आत्मकथा के समकक्ष नहीं है।

आचार्य द्विवेदी की इन दोनों कृतियों का हिन्दी जगत् में महत्त्व

पूर्ण स्थान है। वृंदावनलाल वर्मा के बाद ऐतिहासिक उपन्यास का स्वरूप आपकी लेखनी द्वारा और भी निखार को प्राप्त हुआ है। इस दृष्टि से आधुनिक ऐतिहासिक उपन्यासकारों में आचार्य द्विवेदी का स्थान काफी गौरवास्पद है।

८ वृन्द रत्न दास : " इरावती " : १९४७ :

इसकी कथावस्तु हैहय नरेश कर्णदेव का कालिंजर के कीर्तिवर्मा पर आक्रमण और विजय गोपाल सेनापति द्वारा कर्णदेव की पराजय और कीर्ति वर्मा की पुनः राज्य-प्राप्ति आदि घटनाओं पर आधारित है। इन युद्ध-प्रसंगों के साथ ही गोपाल और इरावती के प्रणय-प्रसंग का भी सुंदर संयोजन हुआ है। कतिपय ऐतिहासिक घटनाओं और पात्रों के साथ लेखक ने अपनी कल्पना का सुंदर उपयोग किया है। इतिहास और रोमांस के समन्वय ने कृति को काफी रोचक बना दिया है। पात्रों का चरित्र-चित्रण सजीव और यथार्थ है। कथोपकथन कम हैं, और जो हैं वे संक्षिप्त एवं नाटकीय। वातावरण का निरूपण कौशलपूर्ण है। भाषा परिष्कृत और संस्कृतनिष्ठ है, एवं शैली वर्णनात्मक। " इरावती " शीर्षक का हिन्दी में यह दूसरा उपन्यास है, किन्तु कला की दृष्टि से साधारण।

९ डा० रांगेय राघव : (१) मुर्दों का टीला और (२) चीवर

डा० रांगेय राघव अपने विचार-दर्शन और चिंतन में मार्क्सवादी विचार धारा से पूर्णतया प्रभावित हैं। उनके समस्त साहित्य में इसकी गहरी छाया दीख पडती है। अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में भी उनका यही दृष्टिकोण क्रियाशील है। ऐतिहासिक उपन्यास के स्वरूप के विषय में आप इतिहास और कल्पना के रोचक समन्वय के समर्थक हैं।

मुर्दों का टीला :

इसमें " मोहन जादडो " के जीवन की एक काल्पनिक कहानी है।

अपने प्रगतिवादी दृष्टिकोण के अनुसार लेखक ने इसमें मानवतावादी और साम्राज्यवादी दो प्रकार के पात्रों की सृष्टि करके मानवतावादी पात्रों का साम्राज्यवादी प्रवृत्ति वालों के संघर्ष प्रस्तुत किया है। घटनाओं के संयोजन, पात्रों के चरित्र-चित्रण और वातावरण-निरूपण में लेखक के प्रयत्न काफी सफल हैं।

चीवर :

हर्ष और राज्यश्री की जीवन-गाथा इसकी कथावस्तु का आधार है। उपन्यास की घटनाएं और अधिकांश पात्र सर्वथा ऐतिहासिक हैं। शिल्प की दृष्टि से वास्तव में इसमें लेखक ने इतिहास के अस्थि-पंजर को अपनी कल्पना से मांसल और अनुप्राणित कर दिया है। डा० रांगेय राघव की यह एक काफी रोचक और लोकप्रिय कृति है।

उपर्युक्त दोनों कृतियों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि लेखक ने पहली कृति में ऐतिहासिक वातावरण की पृष्ठभूमि में कल्पनाधिक्य का आश्रय लिया है, दूसरी में इतिहास पूर्णतया मुखर है।

शिल्प की दृष्टि से इनके कथानक सर्वथा सीधे और सरल होते हैं। उनमें कलात्मक सौंदर्य का अभाव है। उनके पात्रों का चरित्र-चित्रण कुशलता पूर्ण और मानवी धरातल पर हुआ है। कथोपकथन गतिशील और प्रभावपूर्ण हैं। "मुर्दों का टीला" में कहीं कहीं उनकी विस्तार अखरता है। देशकाल का निरूपण दोनों ही कृतियों में यथातथ्य है। उपन्यास को पढ़ते समय पाठक तद्युगीन वातावरण की अनुभूति करने लगता है। भाषा बहुत सरल और प्रौढ है। आपके प्रकृति वर्णन और वस्तुवर्णन भी आपकी कृतियों के सौंदर्य की अभिवृद्धि करते हैं।

यद्यपि डा० रांगेय राघव मार्क्सवाद से प्रभावित है। किन्तु अपनी

रचनाओं में उन्होंने उसका प्रचारात्मक स्वरूप नहीं आने दिया । अपने दृष्टिकोण को अभिव्यक्ति देने में वे सर्वदा संतुलित रहे हैं ।

१० यशपाल : १ दिव्या २ अमिता

श्री यशपाल ने अपने दोनों ऐतिहासिक उपन्यासों में ऐतिहासिक कल्पना का विशेष रूप से आश्रय लिया है । इतिहास के नाम पर वहां ऐतिहासिक पृष्ठभूमि मात्र प्रस्तुत की गई है और शेष सब कल्पनाजन्य ।

दिव्या :

इसमें बौद्ध कालीन भारत के सामंती जीवन का समाजवादी दृष्टिकोण से चित्रांकन किया गया है । मौर्यकाल तक बौद्ध धर्म पूर्णतया विकृत और वर्णाश्रम-व्यवस्था जीर्ण-शीर्ण । इससे उत्पन्न सामाजिक-दुर्दशा का चित्र लेखक ने दिव्या में प्रस्तुत किया है । यह पृष्ठभूमि ऐतिहासिक है, किन्तु इसके अन्य घटना-प्रसंग, पात्र, (दिव्या स्वयं) आदि लेखक की कल्पना-सृष्टि है । उपन्यास में दिव्या, पृथुसेन, रुद्रधर, मारिश आदि पात्रों का चरित्र-चित्रण सुंदर बन पडा है । कथोपकथन लम्बे और चिंतन-प्रधान हैं । भाषा भाव-प्रवण, गूढ और दर्शन प्रधान है । कृति में लेखक का प्रचारात्मक दृष्टिकोण व्यापक रूप में विद्यमान है । " दिव्या " एक सुंदर ऐतिहासिक रोमांस है और इसी पर इसकी लोक-प्रियता आधारित है ।

अमिता :

यह उपन्यास कलिंग की राजकुमारी " अमिता " को लक्ष्य में रख कर लिखा गया है । अशोक का कलिंग पर आक्रमण, भयंकर नर संहार और परिणामतः युद्ध से उसकी विरक्ति और युद्ध न करने की प्रतिज्ञा आदि इतिहास सम्मत घटनाएं हैं एवं अशोक, अमिता और राजमाता आदि पात्र भी ऐतिहासिक हैं ।

शेष सब लेखक के लक्ष्यानुसार कल्पना प्रसूत है । उपन्यास में समाजवादी विचारों की अभिव्यक्ति के साथ विश्व-शांति की भावना का समर्थन भी लेखक का एक लक्ष्य रहा है । औपन्यासिक कला और प्रभाव की दृष्टि से " अमिता " " दिव्या " की अपेक्षा एक श्रेष्ठ कृति है ।

शिल्प की दृष्टि से दोनों उपन्यासों का कथावस्तु सुगठित और कलात्मक है । उनमें आद्योपान्त पाठक का कुतूहल और औत्सुक्य बना रहता है । " दिव्या " और " अमिता " के चरित्र-चित्रण में काफी वैषम्य है । दिव्या का चरित्र उत्तरोत्तर गिरता गया है, जबकि अमिता का सर्वदा उठता गया है । पात्र, प्रसंग और भाषा-वैशिष्ट्य से लेखक उपन्यासों के वातावरण का निर्माण करने में सर्वथा सफल रहा है । " दिव्या " का मारिश लेखक के विचारों का संवाहक है । उसके द्वारा वह प्रगतिवादी विचारों का प्रचार करता है और पलायनवादी प्रवृत्तियों की निंदा । वह सामाजिक समता, स्वतंत्रता का प्रखर समर्थक और शोषण का घोर विरोधी है ।

११ सत्यकेतु विद्यालंकार :

आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्य :

नंदवंशीय राजा सुमाल्य के समय, भारत की विशृंखलित शक्तियों का संगठित कर, कुमार चंद्रगुप्त मौर्य की सहायता से नंदवंश का नाश करवा और उत्तर-पश्चिमी भारत को सिकन्दर के प्रतिनिधि यवनों की अधीनता से मुक्ति दिला सम्पूर्ण ~~भारत~~ भारत में एक विशाल साम्राज्य की स्थापना करने वाले आचार्य विष्णु-गुप्त चाणक्य का गौरवशाली व्यक्तित्व और उसका निरूपण उपन्यास की विषय-वस्तु और उसका लक्ष्य है । उपन्यास में आचार्य का चरित्र सर्वथा श्रेष्ठ, आदर्शयुक्त और प्रेरणादायी है । अन्य पात्रों में कुमार चंद्र गुप्त, करमिका, शकरार, इन्द्र दत्त आदि पात्रों का रेखांकन भी सुंदर बन पडा है । कथोपकथन लेखक के उद्देश्यानुरूप हैं,

कहीं कहीं वे काफी सुदीर्घ रूप में होने से कथाप्रवाह में बाधक से लगते हैं। देश-काल के चित्रण में लेखक पूर्णतया सफल रहा है, इसके लिए उसने चाणक्य के अर्थशास्त्र का ही आधार ग्रहण किया है। समग्रतः लेखक अपने उद्देश्य में सफल रहा है।

अन्य ऐतिहासिक उपन्यासकार :

विवेच्य युग में ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना काफी लोकप्रिय रही। इससे अन्य कतिपय उपन्यासकार भी इस ओर आकर्षित हुए और उन्होंने अपनी रुचि और क्षमतानुसार ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना की। इनमें से उल्लेखनीय ऐतिहासिक उपन्यासकार और उनकी कृतियां निम्नांकित हैं :-

१ हरिभाऊ उपाध्याय	:	१ प्रिय दर्शी अशोक
२ रघुवीर शरण मित्र	:	१ आग और पानी, २ पहली हार, और ३ सोने की रात
३ रणवीर	:	१ महामंत्री चाणक्य
४ चंद्रशेखर शास्त्री	:	१ श्रेणिक बिम्बसार
५ कवींद्र मंजुल	:	१ चंद्र मित्रा, २ सुमंगला, आदि।

उपर्युक्त ऐतिहासिक उपन्यासों में ऐतिहासिक उपन्यास के शिल्प का अपेक्षित रूप प्रायः नहींवत् है। इनका केवल ऐतिहासिक महत्त्व है।

इनके अतिरिक्त कुछ एक और ऐतिहासिक उपन्यासकारों का योगदान भी लक्ष्य में लेने योग्य है। इनमें आते हैं, गुरुदत्त, धर्मेन्द्र, श्री राम वात्सायन, इन्द्र विद्यावाचस्पति, डा० राम रतन भटनागर, और श्री गोविन्द वल्लभ पंत।

श्री गुरुदत्त ने " बहती रेखा " में भगवान बुद्ध के १०० वर्ष पश्चात् के भारत में बौद्धमत और आर्यमत का संघर्ष और गणराज्यों की समाप्ति का

चित्र प्रस्तुत किया है। वातावरण की सृष्टि सर्वथा ऐतिहासिकता पूर्ण है, शेष सब कल्पनाजन्य। भाषा सरल और प्रवाहमयी है तथा शैली इतिवृत्तात्मक। उपन्यासकार अपने प्रयत्न में काफी सफल रहा है। " विक्रमांक साहसांक " और " पुष्यमित्र शुंग " उनके अन्य दो ऐतिहासिक उपन्यास हैं। लेखक की रचनाएं सोद्देश्य और समस्या प्रधान हैं। इस दिशा में उनका लेखन कार्य अभी प्रगति शील है।

श्री धर्मेन्द्र के " रजिया " और " तैमूर " दो उपन्यास हैं। दोनों में अभीष्ट पात्रों के चरित्र-चित्रण और उनकी प्रवृत्तियों को अभिव्यक्ति देने का प्रयास है।

इसी प्रकार श्री राम वात्स्यायन के " रण थम्भोर " में अलाउद्दीन के रण थम्भोर पर आक्रमण और उससे उत्पन्न स्थितियों का सुंदर अंकन है। श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति का " शाह आलम की आँखें " एक सर्वथा कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास है। डा० राम रतन भट नागर के आम्रपाली और जय वासुदेव बौद्धकालीन भारत के इतिहास पर आधारित हैं। द्वितीय उपन्यास में जैन-बौद्ध और हिन्दु धर्म का संघर्ष निरूपित है। श्री गोविंद वल्लभ पंत के " अभिशाप " " नूरजहाँ " और " एक सत्र " भी उल्लेखनीय ऐतिहासिक उपन्यास हैं। पंत जी में कुशल ऐतिहासिक उपन्यासकार की कला का आभास होता है।

इनके अतिरिक्त ऐतिहासिक उपन्यास के लेखन का कार्य आज भी प्रगति शील है +

निष्कर्ष :

विकास युग के ऐतिहासिक उपन्यासकारों की रचनाओं का उपर्युक्त अध्ययन दो प्रकार के ऐतिहासिक उपन्यासकारों से हमारा परिचय कराता है। प्रथम वर्ग में विशुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास के दृष्टिकोण को लक्ष्य में रख कर रचना करने वाले

ऐतिहासिक उपन्यासकार आते हैं, तो द्वितीय में वाद-विशेष के दृष्टिकोण के अनुसार रचना करने वाले कृतिकार । इनके अपने विचार-दर्शन और दृष्टिबिंदु के अनुसार इनकी कृतियों का विषय गत और शिल्पगत स्वरूप भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहा । डा० वृंदावनलाल वर्मा और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की रचनाएं प्रथम वर्ग की परिचायक हैं, तो राहुल सांकृत्यायन, यशपाल और डा० रांगेय राघव की कृतियां द्वितीय वर्ग की । परिणामतः प्रथम वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यासों में ऐतिहासिक ~~उपन्यास~~ उपन्यास की कला का उत्कृष्ट स्वरूप दृष्टिगत होता है, जबकि द्वितीय वर्ग की रचनाओं में उसका स्तर अपेक्षाकृत न्यून है ।

रचनागत उद्देश्य की दृष्टि से प्रथम वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यासकार भारतीय अतीत के गौरव की स्थापना और भारतीय वीर पुरुषों के चरित्र-चित्रण द्वारा राष्ट्रीय चेतना की जागृति कर, विघायक प्रथाओं के उन्मूलन द्वारा राष्ट्रीय उत्थान और अभ्युदय की भावनाओं का अपनी कृतियों में उद्बोधन करते रहे हैं । द्वितीय वर्ग के लेखक समाजवादी विचार धारा को जन जन तक पहुंचाने के उद्देश्य से राज्य तंत्र और अध्यात्मवाद का मरसक खंडन करते हुए समाजवादी व्यवस्था का आकर्षक चित्रण करते रहे हैं ।

वैसे एक मूल भूत तथ्य दोनों वर्गों के लेखकों की कृतियों में सामान्य रूप से प्राप्य है और वह है जन साधारण का कल्याण और उसका हित । अंतर केवल दोनों की दृष्टि में है । एक उसे शांतिमय और वैधानिक रीति से प्राप्त करने की दिशा इंगित करता है, तो दूसरा उसे संघर्ष और क्रांति द्वारा प्राप्तव्य घोषित करता है ।

इस युग की सुप्रसिद्ध कृतियों में वर्माजी की झांसी की रानी, मृगनयनी, कचनार, विराटा की पद्मिनी, शास्त्रीजी की वैशाली की नगर वधु और

सोमनाथ, राहुलजी का " सिंह सेना पति ", यशपाल की दिव्या और अमिता, आचार्य द्विवेदी की बाणभट्ट की आत्मकथा, डा० रांगेय राघव का " मुर्दों का टीला", और चीवर आदि उल्लेखनीय हैं । इन कृतियों ने पाठकों में राष्ट्रीय चेतना और आर्थिक शोषण के प्रति जागृति की भावनाओं को सक्रिया बनाने में काफी योगदान दिया है । ऐतिहासिक उपन्यास कला की दृष्टि से हिन्दी साहित्य में इन कृतियों का स्थान सदैव गौरवास्पद रहेगा ।

कला-साधना और शिल्प के विकास में योगदान की दृष्टि से डा० वृंदावन लाल वर्मा निःसंदेह रूप से इस युग के श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भी इसी कोटि के हैं । अन्य ऐतिहासिक उपन्यासकारों ने भी अपनी साहित्य-साधना से ऐतिहासिक उपन्यास साहित्य की पर्याप्त अभिवृद्धि की है । यह उनकी सामुदायिक साधना का ही सुफल है कि भारतीय साहित्य में हिन्दी का ऐतिहासिक उपन्यास साहित्य भी गौरवास्पद स्थान का अधिकारी है ।